Brown Book

TEXT FLY WITHIN
THE BOOK ONLY

UNIVERSAL LIBRARY
OU_182154
UNIVERSAL LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. 483 Accession No. 11293

Author

Title

This book should be returned on or before the date last marked below.

अदल-बदल

"अपनी पत्नियों की आपस में अदला-बदली मत करो"

हज़रत मूसा

लेखक—

आचार्य चतुरसेन

प्रकाशक—

चौधरी एण्ड सन्स

बनारस. १

प्रथम संस्करण

मूल्य १॥।)

प्रकाशक—
चौधरी एण्ड सन्स,
नीचीबाग, बनारस।

मुद्रक—
पं० जानकीशरण त्रिपाठी,
सूर्य प्रेस, काशी।

नए युग का सबसे कठिन प्रश्न ?

आज के नए युग ने मनुष्य के सामने जितने आर्थिक और राजनैतिक एव सामाजिक उलझन भरे प्रश्न रखे हैं उनमें सबसे अधिक महत्वपूर्ण और कठिन प्रश्न यह है कि आज के इस नए युग में स्त्री का समाज में कौन सा स्थान रहेगा। सभ्यता के आदि काल से स्त्री को पुरुष ने अपना परिग्रह बना लिया है। सारे ही संसार में कुछ घट बढ़कर ऐसा ही है। सभ्यता के विकास के साथ साथ स्त्री के प्रति यह परिग्रह भावना बढ़ती गई और वह सच्चे अर्थों में पुरुष की सम्पत्ति बन गई। पुरुष को उसे यत्न से सम्हाल कर रखने, उसका स्वच्छन्द उपयोग करने और उसे जैसे चाहे नष्ट तक कर डालने का अबाध अधिकार समाज में मिलता ही चला गया। इस सम्पत्ति को प्राप्त करने, इसकी रक्षा करने, हरण करने, भोग करने, अपनाने, हथियाने के लिये पुरुष ने बड़े-बड़े खूनी युद्ध किये। संसार के आधे से अधिक घातक युद्ध इसी संपत्ति के लिये हुये।

परन्तु आज वह युग बीत गया। आज की स्त्री पुरुष की संपत्ति-परिग्रह बन कर नहीं रह सकती। वह पुरुष की सच्चे अर्थों में संगिनी समभागिनी बन कर रहेगी। पुरुष यदि स्त्री के इस प्राप्तव्य को देने में यदि आज आना कानी करता है तो निसंदेह उसे स्त्रियों से ऐसी खूनी लड़ाई लड़नी पड़ेगी जैसा आज

तक मनुष्य-इतिहास में मनुष्य ने इस स्त्री सम्पत्ति को अपहरण करने के लिये भी युग-युग में कभी नहीं लड़ी। फिर भी उसकी जीत नहीं होगी। जीत होगी स्त्री की। यह मैं अभी से कहे देता हूँ। और पुरुषों को खासकर पतियों को यह नेक सलाह देता हूँ कि वे अब केवल परिणय—प्रेम—और सहृदयता से स्त्री को अपनी जीवन-संगिनी बनाना सीख लें, जिससे उनका घर बसा का बसा रह जाय। क्योंकि यह 'अदल-बदल' की जो हवा योरोप के घरों को उजाड़ कर यहाँ आई है उनके घर में घुस गई तो वे किसी दिन दफ्तर से लौट कर अपने घर को सूना और पड़ोसी के घर को आबाद पायेंगे। बस, इसी में सब कुछ समझ जाइये—ज्यादा खोलकर मत कहलवाइये।

ज्ञानधाम, दिल्ली शाहादरा
१-१-५३

चतुरसेन

१

डाक्टर कृष्णगोपाल आज बहुत खुश थे। वे उमंग में भरे थे, जल्दी जल्दी हाथ में डाक्टरी औजारों का बैग लिए घर में घुसे, टेबुल पर बैग पटका, कपड़े उतारे और बाथरूम में घुस गये। बाथरूम से सीटी की तानें आने लगीं और सुगन्धित साबुन की महक घर भर में फैल गई। बाथरूम ही से उन्होंने विमला देवी पर हुक्म चलाया कि झटपट चाइना सिल्क का सूट निकाल दें।

विमला देवी ने सूट निकाल दिया, कोट की पाकेट में रूमाल रख दिया और पतलून में गेलिस चढ़ा दी। परन्तु डाक्टर कृष्ण-गोपाल जब जल्दी जल्दी सूट पहन, माँग-पट्टी से लैस होकर बाहर जाने को तैयार हो गये—तो विमलादेवी ने उनके पास आकर धीरे से कहा—"और खाना ?"

"खाना नहीं खाऊँगा।"

"क्यों ?"

"पार्टी है, वहाँ खाना होगा।"

"लेकिन रोज रोज की ये पार्टियाँ कैसी हैं ?"

"तुम्हें इस पंचायत से वास्ता ?"

"आप नाहक तीखे होते हैं, आखिर यह घर है कि सराय।

सुबह से निकले और अब ६ बजे हैं। दिन भर ग़ायब। अब आये सो चल दिये। शायद १।२ बजे आवेंगें, शराब में बद-हवास, अब मैं कहाँ तक रोज रोज यह भुगतूँ। यह कौन सा जिन्दगी का तरीका है।"

डाक्टर ने घड़ी पर नज़र फेंक कर कहा—"ओफ़, नौ यहीं बज गये? गजब हो गया। झटपट सेफ़ से दो सौ रुपये निकाल दो। देर हो रही है।"

"दो सौ रुपये किसलिये?"

"तुम्हारे क्रिया-कर्म के लिये, कहता हूँ देर हो रही है, और तुम अपनी हुज्जत ही नहीं छोड़ती—अजीब जाहिल हो।"

"जाहिल ही सही, मगर तुम्हारी पत्नी हूँ। मुझे भी कुछ हक है।"

"तो यह हक का दावा अदालत में दाखिल करना बाबा, मेरा वक्त बर्बाद न करो, रुपये निकाल दो।"

"मैं पूछती हूँ किसलिये?"

"तुम पूछने वाली कौन हो, मुझे जरूरत है।"

"मैं जानना चाहती हूँ—क्या जरूरत है।"

"हद कर दी, अरी बेवकूफ औरत मैं रुपये माँग रहा हूँ, सुना कि नहीं।"

"और मैं यह जानना चाहती हूँ कि रोज रोज रात रात भर घर से बाहर रहने, शराबखोरी करने और इतना रुपया फूंकने का मतलब क्या है।"

"तबियत कोफ्त कर दी, मैं कहता हूँ रुपया निकाल दो।"

"मैं कहती हूँ रुपया नहीं मिलेगा।"

"क्यों नहीं मिलेगा, क्या रुपया तुम्हारे बाप का है ?"

"बाप के रुपये पर हिन्दू स्त्री का अधिकार नहीं होता। रुपया मेरे पति का है; उसपर मेरा पूरा अधिकार है।"

"अरी डायन, यह अधिकार तू मेरे मरने के बाद दिखाना, अभी तो मैं जिन्दा हूँ और अपने रुपये का तथा हर एक चीज़ का मालिक मैं ही हूँ।"

"मुझे तुमसे बहस नहीं करनी है। लेकिन मैं तुम्हें आज नहीं जाने दूँगी।"

"तू नहीं जाने देगी ? और रुपया भी नहीं देगी।"

"नहीं दूँगी।"

"तेरी इतनी हिम्मत, मैं तुझे काट कर रख दूँगा।"

"ऐसा कर सकते हो।"

डाक्टर तेजी से आगे बढ़ कर एकदम विमला देवी के निकट आ गए, और दाँत किटकिटा कर कहा—"सेफ की चाभी दे।"

"नहीं दूँगी।"

"अरी चुड़ैल बता चाभी कहाँ है ?"

"नहीं बताऊँगी, नहीं दूंगी।"

"क्या तू आज ही मरना चाहती है।"

"जब मरने का वक्त आयेगा खुशी से मरूँगी।"

"तो मर फिर।"

डाक्टर ने जोर से उसका गला दबाकर उसे ऊपर उठा लिया। और फिर जमीन पर पटक दिया। इसके बाद वे सेफ की चाभी घर भर में ढूँढ़ने को आलमारी और मेजों की ड्रावर से सामान निकाल निकाल कर इधर उधर छितराने लगे। विमला देवी का दीवार से टकरा कर सिर फूट गया और वे खून में नहा गईं। पाँच वर्ष की सोती हुई बच्ची जाग कर चीख मार मार कर रोने लगी। डाक्टर को आखिर चाभी मिल गई। वे सेफ की ओर लपके। पर विमलादेवी ने दौड़ कर दोनों हाथों से सेफ पकड़ लिया। वह सेफ से सीना भिड़ा कर खड़ी हो गईं। डाक्टर ने तड़ातड़ सेफ की बड़ी चाभी की निर्दय मार विमलादेवी की उंगलियों पर मारनी शुरू की। विमलादेवी के हाथ लोहूलुहान हो गये। वे बेहोश होने लगीं। उन्हें एक ओर ढकेल कर डाक्टर कृष्णगोपाल ने सेफ का ताला खोल डाला और नोटों का बण्डल जेब में डाल तेजी से घर के बाहर हो गये। बेहोश और खून में लतपत पत्नी की ओर उन्होंने नजर नहीं डाली। न भय और आतंक से, माता की छाती पर सिसकती हुई पुत्री पर।

—❀—

२

साढ़े आठ बज चुके थे। मास्टर हर प्रसाद अपने दस वर्ष के पुत्र विनोद के साथ बातचीत करके उसका मन बहला रहे थे। ऊपर से वे प्रसन्न अवश्य दीख रहे थे, परन्तु भीतर से उनका मन खिन्न और उदास हो रहा था। इधर दिन दिन भर जो उनकी पत्नी मायादेवी घर से गायब रहने लगीं थीं, यह उन्हें बिल्कुल अच्छा नहीं लग रहा था। उनके समुद्र के समान शान्त और गम्भीर हृदय में भी तूफान के लक्षण प्रकट हो रहे थे। फिर भी पिता-पुत्र प्रेम से बातचीत कर रहे थे ।

विनोद ने कहा—"पिताजी आज आप मुझे महापुरुषों की महिमा समझाइए। मास्टर ने प्रेम की दृष्टि से पुत्र की ओर देखकर कहा—"अहा, महापुरुषों की महिमा, सुनो बेटा, ये भगवान् बुद्ध हैं—" उन्होंने दीवार पर लगी बुद्ध की बड़ी सी तस्वीर की ओर उँगली उठाकर कहा—"जिन्होंने राज-सुख त्याग कठोर संयम व्रत लिया, और विश्व को अहिंसा का संदेश दिया। उन्होंने मूक प्राणियों की ऐसी भलाई की कि आधी दुनिया इनके चरणों में झुक गई।"

फिर उन्होंने शंकराचार्य की मूर्ति की ओर संकेत करके कहा—

"ये शंकर हैं जिन्होंने ब्रह्म-पद पाया, संसार को मायाजाल से छुड़ाया, थोड़ी ही अवस्था में इन्होंने उत्तर से दक्षिण तक नए हिन्दू धर्म की स्थापना की।"

मास्टर बड़ी देर तक उस मूर्ति की ओर एकटक देखते रहे, फिर उन्होंने प्रताप, शिवाजी की ओर संकेत करके कहा—"ये विश्वशिरोमणि प्रताप हैं, जिन्होंने पच्चीस वर्ष बन में दुःख पाए, पर शत्रु को शिर नहीं झुकाया। ये शिवाजी हैं जिन्होंने हिन्दुओं की मर्यादा रक्खी, इन्होंने ऐसी तलवार चलाई कि दक्षिण में इनकी दुहाई फिर गई। अन्त में उन्होंने स्वामी दयानन्द की ओर देखकर कहा—"ये स्वामी दयानन्द हैं, जिन्होंने वेदों का उद्धार किया, सोते हुए हिन्दू धर्म को, सत्य का शंख फूंककर जगा दिया।

फिर मास्टर जी ने गांधी जी के चित्र की ओर उंगली उठाकर कहा—"और ये—"

विनोद ने उतावली से कहा—"बापू हैं मैं जानता हूँ।"

"हाँ, जिन्होंने भारत की दासता की बेड़ियाँ काटी, प्रेम की गंगा भारत में बहाई, हमें जीवन दिया और अपना जीवन बलिदान किया। जो विश्व क्रान्ति के पिता—अहिंसा के पुजारी और सत्य के प्रतीक थे। बड़ी देर तक मास्टर जी दीवार पर लगी हुई उन महापुरुषों की तस्वीरों की प्रसंशा करते रहे—फिर उन्होंने कहा—पुत्र, जो कोई इन महापुरुषों के पदचिन्हों पर चलेगा, उसका जीवन धन्य हो जायगा।"

विनोद ने कहा—पिता जी मैं बड़ा होकर इन महापुरुषों के चरण चिन्हों पर चलूंगा।

मास्टरजी ने पुत्र की पीठ पर प्यार के हाथ फेरते हुए कहा—पुत्र ये सब हमारे देश के पूज्य पुरुष हैं, उनकी नित्य पूजा सेवा करना बालकों का धर्म है।"

पिता पुत्र इस प्रकार वार्तालाप में मगन थे—कि मायादेवी ने झपटते हुए घर में प्रवेश किया। सीधी अपने कमरे में चली गई।

विनोद ने प्रसन्न मुद्रा से कहा—पिताजी! माताजी आ गईं।

मास्टर जी ने सहज स्वर में कहा—"इतनी देर कर दी। बेचारा विनोद भूखा बैठा है, कहता है, माता जी के साथ ही खाऊँगा।"

बालक ने कहा—"माता जी, अभी पिता जी ने भी तो भोजन नहीं किया है। आओ हमको भोजन दो।"

मायादेवी इस समय शृंगार-टेबुल के सामने बैठ कर जल्दी जल्दी होठों पर लिपस्टिक फेर रही थीं, उन्होंने वहीं से कहा—"मुझे फुर्सत नहीं है?" माता का यह रूखा जबाव सुन कर भूखा पुत्र, पिता की ओर देखने लगा।

मास्टर जी ने कहा—"खाना खा लो विनोद की माँ।"

"मैं तो खा आई हूँ।" फिर उसने दो तीन साड़ियाँ उलट पुलट करते हुए पति की ओर देख कर पूछा—जरा देखो तो,

कौन सी ठीक जँचेगी" परन्तु मास्टर ने थोड़ा क्रुद्ध होकर कहा—"ये साड़ियां इस वक्त क्यों देखी जा रही हैं।"

"मुझे जाना है।" माया ने जल्दी २ हाथ चलाते हुए कहा।

मास्टर ने कहा—"यह घर से बाहर जाने का समय नहीं है, बाहर से आकर आराम करने का समय है।

"भाई तुमने तो नाक में दम कर दिया। मुझे जाना है। आज आजाद महिला-संघ में डान्स है, जानते तो हो—मेरे न होने से वहाँ कैसा बावैला मच जायगा।"

"तो दिन २ भर घर से बाहर रहना काफी न था, अब रात-रात भर भी घर से बाहर रहना होगा?"

"पिंजरे में बंद पंछी की तरह रहना मुझे पसंद नहीं है।"

"परन्तु नारी धर्म का निर्वाह घर ही में होता है। घर के बाहर पुरुष का संसार है। घर के बाहर स्त्री, पुरुष की छाया की भाँति अनुगामिनी होकर चल सकती है, और घर के भीतर पुरुष पुरुषत्व धर्म को त्याग कर रह सकता है। यह हमारी युग युग का पुरानी गृहस्थ-मर्यादा है।" मास्टर जी ने आवेश में आकर कहा।

किन्तु माया दूसरे ही मूड में थी। उसने नाक भौं सिकोड़ कर कहा—"इस सड़ी गली मर्यादा के दिन लद गये। अब स्वतन्त्रता के सूर्य ने सब को समान अधिकार दिये हैं, अब आप नारी को बांध कर नहीं रख सकते।"

बाँध कर रखने की बात नहीं। नारी का कार्यक्षेत्र घर है।

पुरुष का घर से बाहर। पुरुष अपने पुरुषार्थ से सुख संपत्ति ढो-ढो कर लाता है, नारी उसे सजा कर उपभोग के योग्य बनाती है। पुरुष का काम प्रकट है। स्त्री का गुप्त है। पुरुष संचय करता है—स्त्री प्रेम दिखा कर उसे पुरस्कृत करती है। पुरुष संसार के झंझटों का बोझ ढो-ढो कर थका मांदा जब घर आता है तो स्त्री प्रेम की वर्षा करके उसकी थकान दूर करती है। पुरुष का धर्म कठोर है, स्त्री का धर्म कोमल और दयनीय है। इसीलिए—नारी का स्थान प्यार है और वहीं रहकर वह पुरुषों पर अमृत की वर्षा कर सकती है।

"और यदि स्त्री भी घर के बाहर अपना कर्मक्षेत्र बनावे तो?"

"तो यह उसका सबसे बड़ा दुर्भाग्य होगा। संसार के झंझटों का झंझावात उसके रूप-रस को सुखाकर उसे नीरस बना डालेगा। घर से बाहर का कठिन संसार पुरुष के मस्तिष्क और बलवान भुजाओं से ही जीता जा सकता है, स्त्री के कोमल बाहु-पाश और भावुक हृदय से नहीं।

"युग युग से नारी को पुरुष ने घर के बन्धन में डालकर कमजोर बना दिया है, अब वे भी पुरुष के समान बल संचित कर घर के बाहर के संसार में विचरण करेंगी।" मायादेवी ने उपेक्षा से पति की ओर देखते हुये कहा।

किन्तु मास्टरजी ने सहज शान्त भाव से कहा—"तब उनमें से पुरुष को उत्साहित करने का जादू उड़ंछू हो जायगा। उनके जिस स्निग्ध स्नेह-रस का पान कर पुरुष मस्त हो जाता है, वह

रूप खत्म हो जायगा। उनके पवित्र आंचल की वायु से पुरुषों की कायरता को नष्ट कर डालने के सामर्थ्य का लोप हो जायगा। पुरुषों का घर सूना हो जायगा। नारी का ध्रुव भंग हो जायेगा।

"यों क्यों नहीं कहते कि नारी के स्वतन्त्र होने से प्रलय हो जायगा।" मायादेवी ने तिनक कर कहा।

"अवश्य हो जायगा। जैसे पृथ्वी अपने ध्रुव पर स्थिर होकर घूमती है, उसी प्रकार घर के केन्द्र में स्त्री को स्थापित करके ही संसार चक्र घूमता है। स्त्री घर की लक्ष्मी है। समाज उन्हीं पर अवलम्बित है। स्त्री केन्द्र से विचलित हुई तो समाज भी छिन्न-भिन्न हो जायगा।

"ऐसा नहीं हो सकता, जैसे पुरुप स्वतन्त्र भाव से घूम फिर कर घर लौट आता है, वैसे स्त्री भी लौट आ सकती है।"

"नहीं आ सकती। पुरुष देखना और जानना चाहता है, अपनाना नहीं। क्योंकि उसमें केवल ज्ञान है। परन्तु स्त्री वस्तु-संसर्ग में आकर उससे लिप्त हो जाती है, क्योंकि उसमें निष्ठा है।"

"क्यों?"

"क्योंकि नारी की प्रतिष्ठा प्राणों में है, पुरुष की विचारों में।"

"नारी समाज का हृदय है, पुरुष समाज का मस्तिष्क। इसलिए नारी सक्रिय है, और पुरुष निष्क्रिय? नारी केन्द्रमुखी शक्ति है, और पुरुष केन्द्रविमुख है। इसीसे नारी को केन्द्र बनाकर पुरुप-संघ बना है जो नारी के चारों ओर चक्कर काटता रहता है।"

"पर जीवन की सामग्री पर नारी का अधिकार है, पुरुष का नहीं।"

"हाँ, किन्तु नारी की इसी शक्ति ने नारी को वस्तुओं से बाँध रखा है।"

"परन्तु अब नारी बन्धनमुक्त होकर रहेगी।"

"तो वह स्वयं नष्ट होकर संसार को और समाज के संगठन को भी नष्ट कर देगी।"

"ये सब पुरुषों के स्वार्थ की बातें हैं।"

"यह वह सत्य है जिसमें नर और नारी के दो रूप होने के भेद छिपे हैं। नर नर है, नारी नारी।"

"परन्तु नर नारी दोनों समान हैं।"

"समान नहीं है, दोनों मिलकर एक इकाई हैं। न पुरुष अकेला एक है, न स्त्री अकेली एक है। दोनों आधे हैं, दोनों मिल कर एक हैं।"

"ऐसा नहीं है।"

"ऐसा ही है। स्त्री पुरुष की भूखी है, पुरुष स्त्री का भूखा है, दोनों में दोनों की कमी है। दोनों एक दूसरे को आत्मदान देकर जब एक होते हैं, तब वे पूर्ण इकाई बनते हैं।"

"स्त्रियों को भी अधिकार है।"

"जब स्त्री पुरुष दोनों मिल कर एक इकाई हुए—तो पृथक अधिकार कहाँ रहे?"

"वे रहेंगे, हम उन्हें प्राप्त करेंगी।"

"अथवा जो प्राप्त हैं उन्हें भी खोयेगी ?"

बात चीत हो रही थी और मायादेवी का श्रृङ्गार भी हो रहा था। अब कंघी चोटी से लैस होकर उन्होंने कहा—"अच्छा, अब मैं जाती हूँ।"

"यह ठीक नहीं है विनोद की माँ।"

"वापस आने पर मैं तुम्हारे उपदेश सुनूँगी। परन्तु अब तो समय बिल्कुल नहीं है।"

मायादेवी तेजी से चल दीं। उन्होंने उलटकर पुत्र और पति की ओर देखा भी नहीं।

—:ॐ:—

३

डाक्टर जब क्लब में पहुँचे तो दस बज रहा था। माया देवी सुर्ख जार्जेट की साड़ी में मूर्तिमान मदिरा बनी हुई थीं। उन्होंने सफेद जाली की चुस्त लीवलेस वास्कट पहनी थी। अपनी कटीली बड़ी-बड़ी आँखों को उठाकर मायादेवी ने कहा—"ओफ, अब आपको फुर्सत मिली है, मर चुकी मैं तो इन्तजार करते करते?"

"मुझे अफसोस है मायादेवी, मुझे देर हो गई। क्या कहूँ, ऐसी जाहिल औरत से पाला पड़ा है कि जिन्दगी कोफ्त हो गई। जब देखिए—रोनी सूरत..."

माया देवी के साथ एक छरहरे बदन का युवक और बैठा था। शराब के गिलास को टेबुल पर रख और सिगरेट का धुँआ मुँह से उड़ाकर उसने कहा—"डाक्टर अब शरीफ आदमियों को जाहिल औरतों से पिण्ड छुड़ा लेना चाहिये। अच्छा मौसम है। डाक्टर अम्बेडकर साहब को दुआ दीजिये और नेहरू साहब की खैर मनाइये कि जिनकी बदौलत हिन्दू कोडबिल पास हो रहा है। अब शरीफ एजुकेटेड हिन्दू लेडीज और जेन्टलमैन दोनों को राहत, आजादी और खुशी हासिल होगी।"

"मगर ये कम्बख्त हिन्दू इसे कानून बनने दें तब तो?

खासकर ये ग्यारह नम्बर के चोटीधारी चण्डूल वह बावैला मचा रहे हैं कि जिसका नाम नहीं।"

"लेकिन दोस्त, आज नहीं तो कल, कोड बिल बन कर ही रहेगा ? इन दकियानूसों की एक न चलेगी।"

"मगर अफसोस, तब तक तो माया देवी बूढ़ी हो जायँगी, इनका सब निखार ही उतर जायगा।"

माया देवी ने तिनक कर कहा—"अच्छा, अब मुझे भी कोसने लगे, यों क्यों नहीं कहते कि माया देवी तब तक मर ही जांयगी।"

"लाहौल बिला कूवत, ऐसी मनहूस बात जबान पर न लाना माया देवी, कह देता हूँ। मरें तुम्हारे दुश्मन ! और इस कोडबिल ने भी तबियत कोफ्त कर दी। लो यारों, एक-एक पैग चढ़ाओ, जिससे तबियत जरा मुरमुरी हो। उन्होंने जोर से पुकारा—बॉय।"

बैरा आ हाजिर हुआ। डाक्टर ने जेब से सौ का नोट निकाल कर कहा—"झटपट दो बोतल विस्की, बर्फ, सोडा।"

"लेकिन हुजूर, आज तो ड्राई डे है !"

"अबे ड्राई डे के बच्चे, ड्राई डे है तो मैं क्या करूँ, क्लब से ला।" उन्होंने एक सौ रुपये का नोट उस पर फेंक दिया। बैरा झुककर सलाम करता हुआ चला गया।

मायादेवी के साथ जो युवक था वह किसी बीमा कम्पनी का एजेण्ट था। वह निहायत नफासत से कपड़े पहने था और पूरा

हिन्दुस्तानी साहब लग रहा था। डाक्टर विलासराय की गंजी खोपड़ी, अधपकी मूछें और कद्दू के समान कोट के बाहर उफनते हुए पेट को वह हिकारत की नजर से देख रहा था।

इस मण्डली में तीसरे महाशय एक सेठजी थे। वे सिल्क का कुर्ता तथा महीन पाढ़ की धोती पर काला पम्प शू डाटे हुए थे। वे चुपचाप मुस्कुरा कर शराब पी रहे थे। रंग उनका गोरा, आँखें बड़ी २ और माथा उज्ज्वल था। उँगलियों में हीरे की अँगुठी थी। डाक्टर को ये भी तिरस्कार की नजर से देख रहे थे। बात यह थी कि ये तीनों जेंटलमैन माया देवी के ग्राहक थे। भीतर से तीनों एक दूसरे से द्वेष रखते थे। ऊपर से चिकनी-चुपड़ी बातें करते थे। माया देवी सबको सुलगातीं। सबको खिलौना बनातीं। उनके साथ खेल करतीं, खिजाती थीं और उसी में उसे मजा आता था।

उसने जरा नाक भौं सिकोड़ कर कहा—"आखिर यह कोड-बिल है क्या बला?

सेठजी का नाम गोपाल जी था। उन्होंने हुमस कर कहा—"मजेदार चीज है मायादेवी, ठीक मौसमी कानून है।"

"मौसमी कैसा?" मायादेवी ने गोपाल सेठ पर कटाक्षपात करते हुए कहा।

"इतना भी नहीं समझतीं? मायादेवी जब उभार पर आई हैं तभी कोडबिल कानून भी उनकी मदद को आ खड़ा हुआ है। उसका मंशा यह है कि मायादेवी, न किसी को जरखरीद बांदी

हैं, न किसी की ताबेदार, वे स्वतन्त्र महिला हैं, अरे साहब, स्वतन्त्र भारत की स्वतन्त्र महिला, वे अपनी कृपादृष्टि से चाहे जिसे निहाल कर दें, चाहे जिसे बर्बाद कर दें।"

डाक्टर ने गिलास खाली करके मेज पर रखते हुए घुड़क कर सेठजी से कहा—"बड़े बदतमीज हो यार, महिलाओं से बात करने का जरा भी सलीका नहीं है तुम्हें, और कोडबिल की मंशा तो तुम जरा भी नहीं समझते ?"

"तो हजूरेवाला ही समझा दें" गोपाल सेठ ने बनते हुए कहा।

"कोड बिल का मंशा यह है कि आजाद भारत की नारियां आजादी के वातावरण में आजादी की सांस लें, हजारों साल से पुरुष उनपर जो अपनी मिल्कियत जताते आते हैं, वह खत्म हो जाय। पुरुप के समान ही उनके अधिकार हों, पुरुप की भांति ही वे रहें, समाज में उनका दर्जा पुरुष ही के समान हो।"

"वाह भाई वाह, खूब रहा" सेठ ने जोर से हँसकर कहा। "तब तो यार, वे बच्चे पैदा ही न करेंगी, उनके दाढ़ी मूछें भी निकल आवेंगी, पुरुष की भाँति जब वे सब काम करेंगी तो उनका स्त्री जाति में जन्म लेना ही व्यर्थ हो गया। तब कहो— हम तुम किसके सहारे जियेंगे, यह बसांती हवा और पैग का गुलाबी सुरूर सब हवा हो जायगा यार !"

"वही गधेपन की हाँकते हो। कोडबिल की यह मंशा नहीं है कि स्त्रियाँ मर्द हो जाँय, उनको दाढ़ी मूछें निकल आवें या वे बच्चे न पैदा करें, यह तो कुदरत का प्रश्न है, इसमें कौन दखल

दे सकता है, कोडबिल का मंशा सिर्फ यह है कि समाज में जो पुरुष उनके मालिक बनते हैं, इन्हें जबरदस्ती अपने साथ बांध रखते हैं, उनके ये मालिकाना अख्तियार खत्म हो जाँय। स्त्रियाँ समाज में पुरुषों के समान हो जाँय।"

"लेकिन यह हो कैसे सकता है?" तरुण युवक ने जिसका नाम हरवंश लाल था—धुँए का बादल बनाते हुए कहा।

"क्यों नहीं हो सकता?" डाक्टर ने जरा तेज होकर कहा।

युवक हरवंश लाल ने कहा—जनाब गुस्सा करने की जरूरत नहीं। बातचीत कीजिये, समझिये समझाइये। पहली बात तो यह कि स्त्रियों का समाज में समान अधिकार हो ही नहीं सकता। उनकी शारीरिक बनावट, मानसिक धरातल और सामाजिक स्थिति ऐसी नहीं है, कि वे स्वतन्त्र रह सकें। उन्हें पुरुषों के संरक्षण में रहना ही होगा। इसमें बुराई भी क्या है, समाज में घर के बाहर बहुत से भेड़िये रहते हैं, उनसे उनकी हत्या होगी। स्त्रियों की हमारे घरों में एक मर्यादा है, उन्हें हम अपने से कमजोर, नीच या दलित नहीं समझते। हम उन्हें अपनी अपेक्षा अधिक पवित्र पूज्य और सम्माननीय समझते हैं। युग युग से पुरुषों ने स्त्रियों की मान-मर्यादा के लिये अपने खून की नदियाँ बहाई हैं, वह इसीलिये कि समाज में पुरुष स्त्री का संरक्षक है। अब यदि वह समाज में बराबर का दर्जा पा जावेंगी—तो पुरुषों की सारी सहानुभूति और संरक्षण खो बैठेंगी। तथा उनकी दशा अत्यन्त दयनीय हो जायगी।"

"ख़ाक दयनीय हो जायगी" माया देवी ने उत्तेजित होकर कहा—"आप यह चाहते हैं कि हम स्त्रियाँ आप पुरुषों की पैर की जूती बनी रहें, आप जो चाहें हमारे साथ जुल्म करें, और हमारी छाती पर मूंग दलें और हम कुछ न कहें। चुपचाप बर्दाश्त करें। हज़रत, अब यह नहीं हो सकता। हम लोगों ने गुलामी के इस कफन को फाड़ फेंकने तथा आजादी की हवा में साँस लेने का पक्का इरादा कर लिया है। दुनियाँ की कोई ताकत अब हमें इस इरादे से रोक नहीं सकती।"

"श्रीमती मायादेवी" युवक ने हँस कर मादक दृष्टि से माया-देवी ओर देखते हुए कहा—"हम मर्दों का इरादा, आप स्त्री के किसी इरादे में दख़ल देने का हक ही नहीं है। पर सच कहने की आप यदि इजाजत दें तो मैं एक ही बात कहूँगा कि आधुनिक काल का प्रत्येक शिक्षित पुरुष जब स्त्रियों के विषय में सोचता है तो वह उनकी उन्नति, आजादी तथा भलाई की ही बात सोचता है, परन्तु आधुनिक काल की प्रत्येक शिक्षित नारी—तो पुरुषों के विषय में केवल एक ही बात सोचती हैं—कि कैसे उन पुरुषों को कुचल दिया जाय, उन्हें पराजित कर दिया जाय! वास्तव में यह बड़ी ही खतरनाक बात है।"

"खतरनाक क्यों है!" माया देवी ने कहा।

"इसलिये कि ऐसा करने से पुरुषों के हृदय में से, स्त्रियों के प्रति प्रेम के जो अटूट सम्बन्ध हैं, वे टूट जावेंगे और उनमें एक परायेपन की भावना उत्पन्न हो जायगी, तथा स्त्रियाँ पुरुषों के

संरक्षण से बाहर निकल कर कठिनाइयों में पड़ जावेंगी ?"

"तब आप चाहते क्या हैं ? यही कि हम लोग सदैव आपकी गुलाम बनी रहें ?"

"आप को गुलाम बनाता कौन है माया देवी, हम पुरुष लोग तो खुद ही आप लोगों के गुलाम हैं। हमारी नकेल तो आप ही के हाथों में है। धन दौलत जो कमा कर लाते हैं, घर में हम स्त्रियों को सौंप देते हैं। उन्हें हमने घर बार की मालकिन बना दिया है। संभव नहीं है—कि हम उनकी रजामन्दी के विरुद्ध कोई काम भी कर सकें।"

"लेकिन यह भी तो कहिये कि घर में हमारी इज्जत क्या है, हमारा अधिकार क्या है ?"

"क्या इज्जत नहीं है ? हम लोग ६ साल मुर्दों से लड़ाई करते हैं तब डाक्टर की डिग्री पाते हैं, परन्तु स्त्री हमसे व्याह करते ही डाक्टरनी बन जाती हैं। ये सेठ जी बैठे हैं पूछिये—कितनों का गला काट कर सेठ बने हैं, और इनकी बीबी तो इनसे व्याह होते ही सेठानी बन गई। तहसीलदार की बीबी तहसीलदारिन, थानेदार की थानेदारिन आप ही बन जाती है कि नहीं ? फिर अधिकार की क्या बात ? घर मे तो आपका ही राज्य है माया देवी, हमारी तो वहां थानेदारी चलती नहीं।"

"परन्तु आप यह भी जानते हैं कि घर के भीतर स्त्रियों ने कितने आंसू बहाए हैं।"

"सो हो सकता है, आप ही कहां जानती हैं कि घर के बाहर

मर्दों ने कितना खून बहाया है! आंसू से तो खून ज्यादा कीमती है मायादेवी, यह तो अपनी २ मर्यादा है। अपना २ कर्तव्य है। वक्त पर हँसना भी पड़ता है, रोना भी पड़ता है। जीना भी पड़ता है और मरना भी पड़ता है। समाज नाम भी तो इसी मर्यादा का है?"

सेठ गोपाल जी खुश होकर बोले—"बहस मजेदार हो रही है, कहिये माया देवी—अब आप वंशगोपाल बाबू की क्या काट करती हैं।"

डाक्टर ने जोश में आकर कहा—"वंशगोपाल बाबू की बात का काट करूँगा मैं। आप यदि स्त्रियों को बच्चे पैदा करने की मशीन और अपनी वासना-पूर्ति का साधन नहीं बनाया चाहते तो जनाब, आपको उन्हें आज़ाद करना पड़ेगा, उन्हें समाज में समानता के अधिकार देने पड़ेंगे।"

"लेकिन किस तरह महाशय, समानता के अधिकारों से आपका मतलब क्या है? आप यह तो नहीं चाहते कि एक बार बच्चा स्त्री जने और दूसरी बार पुरुष। मासिक धर्म एक महीने स्त्री को हो और दूसरे महीने पुरुष को।"

"यह आप बहस नहीं कर रहे हैं, बहस का मखौल उड़ा रहे हैं। मेरा मतलब यह है कि स्त्री-पुरुषों को समाज में समान अधिकार प्राप्त हों।"

"तो इस बात से कौन इन्कार करता है। बात इतनी ही तो है कि पुरुष घर के बाहर काम करते हैं, स्त्रियां घर के भीतर।

अब आप उन्हें घर से बाहर काम करने की आजादी देते हैं तो मेरी समझ में तो आप उन्हें उनकी प्रतिष्ठा तथा शान्ति को खतरे में डालते हैं।"

"यह कैसे?"

"मैं देख रहा हूँ। अब से २०, २५ वर्ष पहिले हमारे घर की बहू बेटियां घर की दहलीज से बाहर पैर नहीं धरती थीं। वे पर्दानशीन महिलाओं की मर्यादा धारण करती थीं। रोती थीं तब भी घर का चाहारदीवारी के भीतर। और हँसती थीं तब भी वहीं। वे अपने पति पर आधारित थीं। पति ही उनका देवता और सब कुछ था। वे लड़ती भी थीं और प्यार भी करती थीं। पर यह बात घर से बाहर नहीं जाती थी। बाहरी पुरुषों के सामने न उनकी आंखें उठती थीं न जबान खुलती थी। वे अधिक पढ़ी लिखी भी न होती थीं। घर गृहस्थी का काम, बच्चों की सार-सम्हार, और पति की सेवा—बस इसी में उनका जीवन जाता था। यह क्या बुरा था?"

"और अब?"

"उनकी क्या? मैं तो यह देखता हूँ कि अच्छे अच्छे घरानों की लड़कियां ग्रेजुएट बन गईं। उनकी व्याह की उम्र ही बीत गई। अब वे आफिसों में, स्कूलों में, सिनेमा में अपने लिये काम की खोज में घूम रही हैं। इस काम से उनकी कितनी अप्रतिष्ठा हो रही है तथा कितना उनके चरित्र का नाश हो रहा है, इसे आँख वाले देख सकते हैं।"

माया देवी अब तक चुप थीं। अब जरा जोश में आकर बोलीं—"तो आप यही चाहते हैं कि स्त्रियां पुरुषों की सदा गुलाम बनी रहें, उन्हीं पर आधारित रहें।"

"यदि थोड़ी देर के लिये यही मान लिया जाय श्रीमती माया देवी, कि वे पुरुषों की गुलाम ही हैं तो दर २ गुलामी की भीख मांगते फिरने से, एक पुरुष की गुलामी क्या बुरी है?"

"यदि वे कोई काम करती हैं, नौकरी करती हैं तो इसमें गुलामी क्या है?"

"अफसोस की बात तो यही है माया देवी, कि सारा मामला रुपयों पैसों पर आकर टिक जाता है। टीचर, डाक्टर बनकर या नौकरी करके वे १००) २००) रुपये पैदा कर सकती हैं—सीनेमा स्टार बनकर वे हजारों रुपये पैदा कर सकती हैं—मोटर में शान से सैर कर सकती हैं, परन्तु सामाजिक जीवन का माप-दण्ड रुपया पैसा ही नहीं है। स्त्री पुरुष की परस्पर की जो शारीरिक और आत्मिक भूख है वही सबसे बड़ी चीज है। उसी की मर्यादा में बांधकर हिन्दू गृहस्थ की स्थापना हुई है। वही हिन्दू गृहस्थ आज छिन्न-भिन्न किया जा रहा है।"

"पर यह हिन्दू गृहस्थ भी तो आर्थिक ही है। उसकी जड़ में तो रुपया पैसा ही है?"

"कैसे?"

"अत्यन्त प्राचीनकाल में, हिन्दुओं में गृहस्थ की मर्यादा न थी। स्त्री पुरुष उन्मुक्त थे। स्त्रियाँ स्वतन्त्र थीं। वे जब जिस

पुरुष से चाहतीं सम्बन्ध स्थापित करके बच्चा पैदा कर सकती थीं, वे ही बच्चे की मालकिन कहलाती थीं, पुरुष का उससे कोई सम्बन्ध न था। बाद में जब धन सम्पत्ति बढ़ी, नागरिकता का उदय हुआ, और पुरुष अपनी विजयिनी शक्ति के कारण उसका मालिक हुआ—तो वह धीरे धीरे स्त्रियों का भी मालिक बनता चला गया। वह जमाना था "जिसकी लाठी उसकी भैंस"। एक दल दूसरे से लड़ता था—तो जीतने वाला दल हारनेवाले दल का घर बार सामान सब लूट लेता था—उसी लूट में वह स्त्रियों को भी लूट लाता और अपने घर की दासी बना कर रखता। तरुणी और सुन्दरी, ये विजिता दासियाँ आगे चलकर आधीन पत्नियाँ बनती गईं। समाज में बहु पत्नीत्व का प्रचलन हुआ और स्त्रियाँ पुरुष के आधीन हुईं।

"किन्तु अब ?"

"अब स्त्रियों की आर्थिक दासता ही उनकी सामाजिक स्वाधीनता की बाधक है। वे घर में रहकर यदि गृहस्थी चलावें तो कुछ कमा तो सकती नहीं। केवल पति की आमदनी पर ही उन्हें निर्भर रहना पड़ता है। पर इतना अवश्य है कि गृहस्थी में गृहिणी पति की कमाई पर निर्भर रहकर भी उतनी निरुपाय नहीं है, उसकी बहुत बड़ी सत्ता है, बहुत भारी अधिकार हैं : पति तो उसके लिये सब बातों का खयाल रखता ही है—पुत्र भी उसकी मान-मर्यादा का पालन करते हैं।"

मायादेवी ने तिनक कर कहा—क्या मर्यादा पालन करते हैं ?

पति के मरने पर वह पति की संपत्ति की मालिक नहीं बन सकती, मालिक बनते हैं लड़के लोग। जब तक पति जीवित है वह उसके आगे हाथ पसारती हैं, और उसके मरने पर पुत्रों के आगे। उनकी दशा तो असहाय भिखारिणी जैसी है।"

"यह ठीक है, बुरे पति और बेटे स्त्रियों को कष्ट देते हैं। इसका कानून से निराकरण अवश्य होना चाहिये। पर कोड बिल तो कुछ दूसरी ही रचना करता है। वह हिन्दू गृहस्थ को भंग करता है।"

"किस प्रकार?"

"तलाक का अधिकार देकर।"

"लेकिन तलाक का अधिकार तो अब रोका नहीं जा सकता।" डाक्टर ने तेजी से कहा।

"हाँ, मैं भी यही समझता हूँ। परन्तु मैं इसका कुछ दूसरा ही कारण समझता हूँ, और आप दूसरा।"

"मेरा तो कहना यही है कि तलाक का अधिकार स्त्री को पुरुष के और पुरुष को स्त्री के जबर्दस्ती बन्धन से मुक्त करने के लिये है।" डाक्टर ने कहा।

"परन्तु मेरा विचार दूसरा है। असल बात यह है कि अंग्रेजों से हमने जो नई बातें अपने जीवन में समावेशित की हैं, उनमें एक नई बात 'एक पत्नी व्रत' है। हिन्दू लॉ के अनुसार हिन्दू गृहस्थ एक ही समय में एक से अनेक पत्नियों से विवाह कर और रख सकता है। आप जानते ही हैं कि प्राचीनकाल के राजा

महाराजाओं के महलों में महिलाओं के रेवड़ भरे रहते थे। अंग्रेजों के संसर्ग से हमने दो बातें ही सीखीं। पहला 'एक पत्नी व्रत' दूसरा समाज में स्त्रियों का समान अधिकार। यद्यपि भारत में भी राम जैसे एक पत्नी व्रती पुरुष हो गये हैं—पर कानूनन अनेक पत्नी रखना निषिद्ध न था। अब भी हिन्दू लॉ के आधीन अनेक पत्नी रखी जा सकती है। परन्तु व्यवहार में यह हीन कर्म माना जाता है। अभी तक 'एक पत्नी व्रत' का कानून नहीं बना था। पुरुष चाहते तो अपनी स्त्री को त्याग दे सकते थे—वह सिर्फ खाना कपड़ा पाने का दावा कर सकती थी और पुरुष झट से दूसरा विवाह कर लेते थे। उसमें कोई बाधा न थी—परन्तु अब जब 'एक पत्नी व्रत' कानूनन कायम हो जायगा तो स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों ही का तलाक अनिवार्य बन जायगा। बिना तलाक की स्थापना के पुरुष एक मिनिट भी तो 'एक पत्नी व्रत' को सहन नहीं कर सकता।"

"क्यों नहीं कर सकता"—इतनी देर बाद सेठजी ने मुँह खोला।

"इसलिये कि वह अपने लम्पट स्वभाव से लाचार है। 'एक पत्नी व्रत' का अर्थ ही यही है कि जब तक पत्नी है तबतक दूसरी स्त्री उसकी पत्नी नहीं बन सकती। अब यदि वह दूसरी स्त्री पर अपना अधिकार कायम रखना चाहता है तो उसे एकमात्र तलाक ही का सहारा रह जाता है। बिना तलाक दिये वह नई सबेलियों का, जीवन भर आनन्द नहीं उठा सकता।"

सेठजी ने जोर से हँस कर कहा—"यार बात तो पते की कही। हमीं को देखो, अपनी बुढ़िया को घसीटे लिये जा रहे हैं। गले में चिपटी पड़ी है। मरे तो दूसरी शादी का डौल करें।"

"जब तलाक चल गया तो मरने की जरूरत ही न रही साहब। तलाक दीजिये—और दूसरी शादी कीजिये।"

"और वह स्त्री ?"

"वह भी दूसरी शादी करे।"

"वाह ! तो यों कहो कि यह तलाक का मसला—अदल बदल का मसला है। अर्थात् बीबी बदलौवल।"

"बेशक, मगर इसकी जड़ में दो बड़ी गहरी बुराइयाँ हैं। एक तो यह कि हमारे गृहस्थ में जो पति पत्नी में गहरी एकता—विश्वास और अभंग सम्बन्ध कायम है—वह नष्ट हो जायगा। पति पत्नी के स्वार्थ भिन्न भिन्न हो जावेंगे। और दाम्पत्य-जीवन छिन्न-भिन्न हो जायगा।

"और दूसरा ?"

"दूसरा इससे भी खराब है। आप जानते हैं कि पुरुष स्त्री के यौवन का ग्राहक है। और स्त्रियों का यौवन ढलने पर उन्हें कोई नहीं पूछता। अब तक हमारे गृहस्थ की यह परिपाटी थी कि स्त्री की उम्र बढ़ती जाती थी, वह पत्नी के बाद मां—मां के बाद दादी बनती जाती थी, इससे उसका मान रुतबा बढ़ता ही जाता था। अब पुरुष तो पुरानी बुढ़िया औरतों को चूस-चूसकर,

तलाक देकर, नई नवेलियों से नया ब्याह रचावेंगे। स्त्रियाँ भी, जब तक उनका रूप यौवन है, नए-नए पंछी फसावेंगी। पर रूप यौवन ढलने पर वे असहाय और अप्रतिष्ठित हो जावेंगी। उनकी बड़ी अधोगति होगी।

सेठजी विचार में पड़ गये। बोले—यार, इस मसले पर तो हमने कोई विचार ही नहीं किया। क्या कहती हो मायादेवी !

"मैं तो आप लोगों की हिमाकत को देख रही हूँ, क्या दकियानूसी मनहूस बहस शुरू की है। शाम का मजा किरकिरा कर दिया। जाइए आप अपनी औरतों को बाँधकर रखिए। मैं तो अन्याय को दाद न दूंगी। और स्त्री की आजादी के लिये पुरुषों से लड़ूँगी, डटकर।"

"और श्रीमती मायादेवी, यह बन्दा इस नेक काम में जी जान से आपकी मदद करेगा।" डाक्टर ने लबालब शराब से भरा गिलास मायादेवी की ओर बढ़ाते हुए कहा—"लीजिये, हलक तर कीजिये इसी बात पर।"

"शुक्रिया, पर मैं ज्यादा शौक नहीं करती। हाँ कहिए, श्रीमती विमला देवी कैसी हैं। आजकल उनसे कैसी पट रही है ?"

"कुछ न पूछो—मुझे तो उसकी सूरत से नफरत है। जब देखो मनहूस सूरत लिये मिनमिनाती रहती है।"

"तो हजरत कभी-कभी यहाँ सोसाइटी ही में लाइये। तरीके सिखाइये। बातें आप बड़ी २ बनाते हैं मगर करनी कुछ नहीं। मैं

कहती हूँ—जो कहते हैं उसपर अमल कीजिये।"

"करूँगा, जरूर करूँगा। मायादेवी, बस आप जरा मेरी पीठ पर रहिए।

सेठजी ने हँसकर कहा—"वाह, क्या बात कही है। अच्छा एक दौर चले इसी बात पर।

सबने गिलास भरे। और गले सींचने लगे।

—:❀:—

४

आजाद महिला-संघ के जल्से से जब माया देवी वापस घर लौटीं तो बहुत कम रात शेष रह गई थी। माया देवी आकर अपने कमरे में सो गईं। दिन निकलने पर भी सोती ही रहीं। तमाम दिन वे सोती ही रहीं। मास्टर साहेब यद्यपि पत्नी के स्वेच्छाचार से खुश न थे, फिर भी उन्होंने उसे एक दो बार उठने के लिये कहा—पर मायादेवी ने—हरबार जवाब दिया कि तबियत अच्छी नहीं है। विवश मास्टर बेचारे स्वयं खा-पका कर पुत्र को लेकर स्कूल चले गये। स्कूल से लौटकर जब शाम को उन्होंने देखा कि मायादेवी अब भी सो ही रही हैं और जो भोजन वे बनाकर उसके लिये रख गये थे वह भी उन्होंने खाया पिया नहीं हैं—तब वे उसके कमरे में जाकर बोले—

"क्या बात है विनोद की मां, तमाम दिन बीत गया, कबतक सोती रहोगी।" माया ने क्रोध से कहा-"तुम बड़े निर्दयी आदमी हो। आदमी की तबियत का भी ख्याल नहीं रखते। मैं मर रही हूँ और तुम्हें परवा नहीं।"

"पर तुम्हें हुआ क्या है?"

"मेरी तबियत बहुत खराब है"

मास्टर ने उसका अंग छूकर कहा-"बुखार तो मालूम नहीं होता।"

"तुम क्या डाक्टर हो, और तुम्हें मालूम क्योंकर होगा, मैं जब तक मर न जाऊं, तुम्हें मेरी बीमारी का विश्वास क्यों आने लगा।"

"तो तुम चाहती क्या हो, क्या डाक्टर बुला लाऊँ ?"

"डाक्टर क्या चाहने से बुलाया जाता है ? फिर तुम डाक्टर को बुलाओगे क्यों ? रुपया जो खर्च हो जायागा।"

मास्टर ने क्षणभर सोचा। फिर धीरे से कहा—"जाता हूं, डाक्टर बुला लाता हूँ"

माया ने कहा—"कौन सा डाक्टर लाओगे ?"

"किसे लाऊँ ?"

"उस मुहल्ले के डाक्टर का क्या नाम है, परसों पड़ोस में आया था। एक दिन की दवा में आराम हो गया। उसी को बुलाओ।"

मास्टर जाकर कृष्ण गोपाल को बुला लाये। डाक्टर ने मायादेवी की भली-भाँति जाँच की। दिल देखा, नब्ज देखी, जबान देखी, पीठ उँगलियों से ठोकी, आखें देखी और कुछ गहरे सोच में गुम-सुम बैठ गये।

मास्टर ने शंकित दृष्टि से डाक्टर को देखकर कहा—"डाक्टर साहेब, क्या हालत है ?"

डाक्टर ने मास्टर को एक तरफ ले जाकर कहा—"अभी, कुछ नहीं कह सकता। बुखार तो नहीं है, मगर हथेली और तलुओं में जितनी गर्मी होनी चाहिये उतनी नहीं है, आँखों का रंग हर पल

में बदलता है, ओठ सूख गए हैं, नाड़ी की चाल बहुत खराब तो नहीं है, परन्तु अनियमित है, उधर दिल की धड़कन......डाक्टर एकाएक चुप हो गए। वे जैसे किसी गम्भीर समस्या को हल कर रहे हों। मास्टर साहब ने घबराकर कहा—"कहिए, कहिए, दिल की धड़कन !"

डाक्टर ने हाथ की घड़ी पर एक नजर डाली। फिर कहा—"मैं जरा द्विविधा में पड़ गया हूँ। फिर कुछ सोचकर कहा—सूई लगानी ही पड़ेगी !"

मास्टर ने डरते डरते कहा—"सूई !" मास्टर ने माया की ओर घबराई दृष्टि से देखा। माया ने डाक्टर की ओर एक बार देखकर आँखें नीची कर लीं। डाक्टर ने प्रिस्क्रिप्शन लिखकर धीरे से कहा—"जी हाँ, सुई लगाना जरूरी है, यह प्रिस्क्रिप्शन लीजिए, और जरा जल्दी से डिस्पैन्सरी तक चले जाइये, यह दवा ले आइए।"

"और आप तब तक ?" मास्टर ने प्रिस्क्रिप्शन हाथ में लेकर कहा।

"फिक्र मत कीजिए। हाँ जरा गर्म पानी...."

मास्टर ने विनोद से कहा—"बेटे, मै अभी दवा लेकर आता हूँ। तुम जरा अँगीठी जलाकर पानी गर्म तो कर दो।"

मास्टर तेजी से चले गए। डाक्टर ने सीटी बजाते हुए माया देवी की ओर देखा, फिर विनोद से कहा—"जरा जल्दी करो बेटे, हाँ, इधर धुंआ मत करो, तुम्हारी माताजी को तकलीफ

होगी, अँगीठी उधर बाहर ले जाओ।"

विनोद ने कहा—"बहुत अच्छा!" वह बाहर जाकर अंगीठी जलाने लगा।

अब डाक्टर ने इत्मीनान से मायादेवी के पास कुर्सी खींचकर बैठते हुए कहा—"कहिए हुजूर, क्या इरादा है, आप झूठमूठ किसलिये बीमार बनी हैं, देखने में तो आप असल हीरे की कनी हैं।"

मायादेवी ने मुस्कुराकर कहा—"बड़े चंट हैं आप डाक्टर, दोनों को रफू चक्कर कर दिया, लेकिन मैं सचमुच बीमार हूँ।"

"बीमारी क्या है?"

"आप इतने बड़े डाक्टर हैं, पता लगाइये!"

"नहीं लगा सकता मायादेवी, अब आप ही मदद कीजिए!"

"आपकी डाक्टरी को जंग लग गई क्या?"

"जंग ही लग गई समझिये, आप हैं ही ऐसी कि देखते ही आदमी की अक्ल पर पत्थर पड़ जाते हैं।"

"अच्छा ही है, मगर मैं परेशान हूँ!"

"किससे?"

"बीमारी से और किससे!"

"लेकिन हुजूर, बीमारी क्या है?"

"रात भर नींद नहीं आती।"

"वाह, इस बीमारी का तो मैं स्पेशलिस्ट हूँ। मगर यह कहिए कि आपके दिल में कुछ अनोखे अनोखे खयाल तो नहीं आते?"

"अनोखे खयाल ?"

"जी हाँ, जिनमें दिल की उमंगें उमड़ती हुई हों, बढ़े चढ़े हौसले हों, जीवन का भरपूर सुख लेने, दुनिया को जी भरकर देखने के इरादे हों।"

"हाँ, हाँ आते हैं, परन्तु यह भी कोई बीमारी है ?"

"बड़ी भारी बीमारी है, मगर यह कहिए मायादेवी, इस भैंसे के साथ आपकी कैसे कटती होगी। माशा अल्ला, आप एक अपटु-डेट, ऊँचे खयाल की स्मार्ट लेडी हैं, ऐसा मालूम होता है जैसे आपका जन्म खुश होने और खेलने खाने के लिए ही हुआ हो। लेकिन बुरा मत मानिए मायादेवी, मास्टर साहेब अजब बागड़-बिल्ला—मेरा मतलब आपके लायक तो वे किसी हालत में नहीं मालूम होते।"

"ओफ, आप यह क्या कह रहे हैं।"

"श्रीमती जी, स्त्री का जन्म प्रेम के लिये हुआ है, जो स्त्री प्रेम के तत्व को जानती है, मैं उसके चरणों का दास हूँ।"

"आपने तो मेरा दुख बढ़ा दिया। मेरा दुखता फोड़ा छू दिया।"

"अब इस फोड़े को चीर फाड़ कर इसका सब मवाद निकाल कर अच्छा करूँगा।"

"डाक्टर—आप आशाओं का बहुत बोझ मत लादिए।"

"वाह, आशा का संदेश तो आप ही की आँखों में है।" डाक्टर मायादेवी की तरफ एक दुष्टताभरी दृष्टि से देख कर हँस दिया।

मायादेवी ने नकली क्रोध से कहा—"ओफ, आप गोली मार कर हँसते हैं डाक्टर।"

"गोली मारना वीरता का काम है, और गोली मार कर हँसना, वीरता से भी बढ़कर है। तो आपके कथन का मतलब यह हुआ कि मैं अपने से भी बड़ा हूँ।"

इतना कहकर उस डाक्टर ने एकाएक मायादेवी का हाथ पकड़ लिया, और कहा—"मायादेवी, मैं समझता हूँ कि तुम गलत जगह पर आयी हो, मैं तुम्हारा हाथ पकड़ कर संसार में उतर पड़ना चाहता हूँ।"

"मैं ऊब गई हूँ।" माया ने वेग से साँस लेकर कहा।

"तो साहस करो" डाक्टर ने माया का नर्म हाथ अपनी मुट्ठी में कस लिया।

"मगर कैसे?" मायादेवी ने बेचैन होकर कहा।

"हिन्दू कोडबिल हमपर आशीर्वाद की वर्षा करेगा, समझ लो वह आपके और मेरे लिये ही बन रहा है, आओ, दुनिया के सामने नया आदर्श उपस्थित करो।" मायादेवी ने घबरा कर अपना हाथ डाक्टर के हाथ से खींच कर कहा—ठहरो, मुझे कुछ सोचने दो।

इसी समय मास्टर साहेब ने झपटते हुये आकर पुत्र को पुकार कर कहा—

"पानी गर्म हुआ बेटे।"

"जी हाँ, गर्म हो गया।"

डाक्टर ने सूई लगा कर कहा—मास्टर साहेब श्रीमतीजी को शायद बारह सूई लगानी पड़ेगी। मेरा निरन्तर आना मुश्किल है, बहुत काम रहता है, अच्छा होता, श्रीमतीजी बारह एक बजे दोपहर को डिस्पेन्सरी में आ जाया करें, उसी समय जरा फुर्सत रहती है। ज्यादा वक्त नहीं लगेगा।"

मास्टर साहेब ने सिर खुजाकर कहा—लेकिन वह तो मेरे स्कूल जाने का समय है।

"तो क्या हर्ज है, श्रीमतीजी बच्चे के साथ या किसी नौकर को लेकर आ सकती हैं, ज्यादा दूर भी तो नहीं है।"

मास्टर साहेब ने कहा–"तब ठीक है, ऐसा ही होगा, आपका मैं बहुत कृतज्ञ हूँ।" उन्होंने फीस देकर डाक्टर को विदा किया।

—:⁂:—

५

डाक्टर कृष्ण गोपाल ने श्रीमती मायादेवी का ठीक २ इलाज कर दिया। उनका प्रतिदिन डिस्पैन्सरी में जाना, यथेष्ट समय तक वहाँ ठहरना, गपशप उड़ाना, ठहाके लगाना, बालक की आँखों में धूल झोंकना, सब कुछ हुआ। मायादेवी की धृष्टता और साहस बहुत बढ़ गया। डाक्टर से, प्रथम संकेत में साफ-साफ उनकी बातचीत हो गई। प्रेम के बहुत २ प्रवचन हुए, वादे हुए, मान मनौव्वल हुई। अंत में दोनों ही इस परिणाम पर पहुँचे कि दोनों को एक होकर रहने ही में उनका और संसार का भला है।

इसका परिणाम यह हुआ कि मायादेवी का मन अपने पति-पुत्र और घर से बिल्कुल उतर गया और उसका मन इन सबसे विद्रोह करने को उन्मत्त हो उठा। स्त्री स्वातन्त्र्य की आड़ में वासना और अज्ञान का जो अस्तित्व था, उसपर उसने विचार नहीं किया।

डाक्टर कृष्णगोपाल दुनिया देखे हुए चंट आदमी थे। मायादेवी पर उनकी बहुत दिन से नजर थी। अब ज्योंही उन्हें माया की मानसिक दुर्बलता का पता चला तो उन्होंने उसे स्त्रियों की स्वाधीनता की वासना से अभिभूत कर दिया। मायादेवी के सिरपर स्त्री-स्वातन्त्र्य का ऐसा भूत सवार हुआ कि उन्होंने इसके

लिये बड़े से बड़ा खतरा उठाना स्वीकार कर लिया। और एक दिन डाक्टर से उनकी खुलकर इस सम्बन्ध में बात-चीत हुई।

डाक्टर ने कहा—अब आँख-मिचौनी खेलने का क्या काम है मायादेवी ! जो करना है वह कर डालिये।

"मैं भी यही चाहती हूँ। परन्तु आप से डरती हूँ। सच पूछा जाय तो मै पुरुष मात्र पर तनिक भी विश्वास नहीं करती।"

"क्या मुझपर भी !"

"क्यों ? आप में क्या सुरखाब के पर लगे हैं।"

"मेरा तो कुछ ऐसा ही ख़याल था।"

"वह किस आधार पर ?"

"श्रीमती मायादेवी इस दास पर इतनी कृपादृष्टि रखती हैं, इसी आधार पर !"

"तो आप मुंह धो रखिये ! मै पुरुषों की, कानी कौड़ी के बराबर भी इज्जत नहीं करती। मै उनके फदे मे फँसकर अपनी स्वाधीनता नष्ट करना नही चाहती। मुझे क्या पड़ी है कि एक बन्धन छोड़ दूसरे मे गर्दन फसाऊँ।"

"तो आपके विचार से किसी को प्रेम करना भी गुनाह हो गया।"

"यह तो मैं नहीं जानती, परन्तु मैं पुरुषों के प्रेम पर कोई भरोसा नहीं करती। उनका प्रेम वास्तव में स्त्रियों को फँसाने का जाल है।

"यह महज आप का ख्याल ही ख़्याल है माया देवी। पुरुष जब किसी स्त्री से प्रेम करता है तो अपनी हँसी खो डालता है, अभी आप का शायद किसी पुरुष से वास्ता नहीं पड़ा है।"

डाक्टर ने अजब लहजे में कुछ मुस्कुरा कर यह बात कही और सिगरेट निकाल कर जलाई।

मायादेवी ने मुस्कुरा कर कहा—"देखती हूँ, यदि कोई पुरुष मिल गया तो जाँच कर देखूँगी।"

"अवश्य देखिये मायादेवी।"

मायादेवी ने हँस कर नमस्ते किया और चल दी। लेकिन डाक्टर ने बाधा देकर कहा—

"यह क्या? आप बिना ही जबाब दिये चल दीं। क्या मैं समझूँ कि आप मैदान छोड़ कर भाग रही हैं।"

"अच्छा, आप ऐसा समझने की भी जुर्रत कर सकते हैं? मायादेवी ने जरा नखरे से मुस्कुरा कर कहा।

डाक्टर ने हँस कर कहा—"तो वादा कीजिये आज रात को क्लब में अवश्य आने की कृपा करेंगी।"

"देखा जायगा, तबियत हुई तो आऊँगी।"

"देखिये, आप इस समय एक डाक्टर के सामने हैं। तबियत में यदि कुछ गड़बड़ी हो तो अभी कह दीजिये, चुटकी बजाते मैं ठीक कर दूँगा। आप मेरी सुई की करामात तो जानती ही हैं।"

"ये फाँसे आप मास्टर साहब को ही दीजिये। मायादेवी पर उनका असर कुछ नहीं हो सकता।"

"तब तो हाथ जोड़ कर प्रार्थना करने के सिवाय और कोई चारा ही नहीं रह जाता।"

"यह आप जानें, मैं तो आप से अनुरोध करती नहीं।"

"तो मायादेवी, मैं हाथ जोड़ कर प्रार्थना करता हूँ कि आज आप क्लब में अवश्य पधारिये। सेठ साहब का भी भारी अनुरोध है।"

"अच्छा आऊँगी—मायादेवी ने एक कटाक्षपात किया, और चल दी।"

—:❀:—

६

डाक्टर कृष्ण गोपाल की पत्नी विमलादेवी एक आदर्श हिन्दू महिला थीं—वे अधिक शिक्षिता तो न थीं, परन्तु शील-सहिष्णुता-परिश्रम और निष्ठा में वे अद्वितीय थीं। कृष्ण गोपाल के साथ विमलादेवी का विवाह हुए बारह साल हो गये थे। इस बीच उनकी तीन संतान हुई, जिनमें केवल एक पुत्री सावत्री नौ वर्ष की जिवित थी। दो पुत्र शौशव अवस्था ही में मर चुके थे। जीवन के प्रारम्भ ही में संतान का घाव खाने से विमलादेवी अपने जीवन के प्रारम्भ ही में गम्भीर हो गई थीं। वैसे भी वह धीर-गम्भीर प्रकृति की स्त्री थीं। वे दिन भर अपने घर गृरस्थी के धन्धे से लगी रहतीं। पति सेवा भी वह करतीं। पुत्री सावित्री बहुधा बीमार रहती थी। दो संतानों के बाद इस पुत्री को पाकर विमला देवी का मोह इसी पुत्री पर केन्द्रित हो गया था। इससे वह केवल पुत्री सावित्री को प्यार ही न करती थीं, वरन् उसके लिये विकल भी रहती थीं। पुत्री के खराब स्वास्थ से वह बहुत भयभीय रहती थीं।

डाक्टर कृष्ण गोपाल ने जब विमलादेवी को लेकर अपनी गृहस्थी की देहरी पर पैर रखा, तब तो उन्होंने भी पत्नी को खूब प्यार किया। पति पत्नी दोनों ही आनन्द से अपनी गृहस्थी

चलाने लगे। वे खुश-मिजाज, मिलनसार और परिश्रमी थे, इससे उनकी प्रैक्टिस खूब चली। परन्तु रुपये की आमदनी ने उनके चरित्र में दोष पैदा कर दिए। वे घर के सम्पन्न पुरुष न थे। साधारण गृहस्थ के लड़के थे। पिता एक साधारण सरकारी क्लर्क थे। उन्होंने बड़े यत्न से पुत्र को शिक्षा दी। कृष्ण गोपाल अपने पिता के अकेले ही पुत्र थे। इससे पिता उन्हें चाहते भी बहुत थे। माता का बचपन ही में देहान्त हो गया था। इससे भी पिता का पुत्र पर बहुत प्रेम था। परन्तु अपनी अवस्था सम्हाल लेने पर जब उनकी डाक्टरी खूब चलने लगी, उन्होंने पिता की कुछ भी खोज खबर नहीं ली। बेचारे अपने देहात के घर में बहुत दिन तक एकांकी जीवन व्यतीत करके उन्होंने परलोक प्रयाण किया।

इधर हाथ में रुपया आते ही डाक्टर कृष्ण गोपाल को चार दोस्तों की मण्डली मिल गई। उसमें कुछ लोग काफी चन्ट थे। उन्होंने डाक्टर को ऐय्याश बनाने में अच्छी सफलता प्राप्त की। इससे दिन दिन डाक्टर घर से बाहर रहने लगे। और उनकी आय का बहुत सा भाग इस मद में खर्च होने लगा।

विमला देवी ने पहिले तो इधर ध्यान नहीं दिया। पर धीरे-धीरे उसे सभी बातें ज्ञात होने लगी। पहिले डाक्टर छिप कर शराब पीते थे, बाद में पीकर बदमस्त होकर घर आने लगे। घर लौटने में उन्हें विलम्ब होने लगा। कभी-कभी तो विमला देवी को पूरी रात-रात भर उनकी प्रतीक्षा करनी पड़ी। बहुत बार विरोध भी करना पड़ा। इससे धीरे २ पति पत्नी में संघर्ष का

उदय हुआ। महाभारत छिड़ जाता और दो-दो दिन तक घर में भोजन न बनता, परन्तु इसमें सारा ही कष्ट विमला देवी को ही भोगना पड़ता। डाक्टर बाहर चार दोस्तों में जाकर खूब खाते पीते और मस्त रहते थे। धीरे-धीरे डाक्टर में आवारागर्दी बढ़ती ही गई। अब उनका मन पुत्री से भी हट गया। संतान स्नेह का जैसे उनके मन में बीज ही न रहा। वे यों भी बहुत कम घर में आते। परन्तु जब-जब आते—या तो शराब के नशे की झोंक में बकते झकते, या बदहवाश होकर सो रहते, या पत्नी से छोटी छोटी बातों में नोक झोक करते।

विमला देवी के धैर्य का भी अंततः बांध टूटा और खूब सहिष्णु और गम्भीर होने पर भी वह अधीर होकर उत्तेजित हो जाती। पहिले डाक्टर सिर्फ बक झक करके ही रह जाते थे, अब मार पीट भी करने लगे। गाली गलौज भी इतनी गन्दी बकते कि विमला देवी—सुनने में असमर्थ हो भाग कर अपनी कोठरी में भीतर से द्वार बन्द करके जा पड़तीं। ऐसी अवस्था में डाक्टर क्रोध से फुफकारते हुए घर से बाहर चले जाते और फिर बहुधा दो-दो तीन-तीन दिन तक घर में न आते थे।

इस प्रकार डाक्टर कृष्ण गोपाल की ज्यों-ज्यों डाक्टरी सफल होती गई, त्यों-त्यों उनकी गृहस्थी बिगड़ती गई। विमला देवी बहुत दुखी रहने लगीं। पुत्री के खराब स्वास्थ ने तो उन्हें चिन्तित कर ही रखा था—अब पति की पुत्री तथा अपनी घर गिरस्थी की ओर से यह उपेक्षा देख उनका मन वेदना और क्षोभ से

भरा रहता। उन्हें बहुधा उपवास करना पड़ता। पति पत्नी में जब झगड़ा होता तब तो निश्चय चूल्हा जलता ही नहीं था, परन्तु अपने मन की विकलता और अन्तरात्मा के क्षोभ के कारण बहुधा ऐसा होता कि पति और पुत्री को खिला-पिला कर वह चुपचाप बिना कुछ खाये-पिये सो जाती।

पुत्री सावित्री यद्यपि नौ वर्ष की छोटी बालिका थी, पर बहुत सौम्य और कोमल वृत्ति की थी। चिरकाल तक अस्वस्थ रहने से उसमें एक गम्भीर उदासी भी आ गई थी। माता के दुःख को वह कुछ-कुछ समझने लगी थी। माँ का प्रेम, उसका सेवा-भाव और उसका दुःख, यह सब देख छोटी सी बालिका माँ का कभी-कभी बहुत लाड़-दुलार करती। उसे यत्न से हठपूर्वक खिलाती, हँसाती और मन रखती। माँ के लिये वह पिता से भी झिड़कियाँ खाती।

दुर्भाग्य से विमला देवी के मातृपक्ष में भी कोई न था। इस से उनका वह सहारा भी नहीं जैसा था। बस सारे संसार में उसकी पुत्री ही उसके लिये एक अवलम्ब थी।

परिस्थिति और आवश्यकता ने विमला देवी को थोड़ा कठोर और दृढ़ भी बना दिया। बहुधा वह पति के अत्याचार का डटकर मुकाबिला करती। वह भी अपने अधिकारों को उतना ही जान गई थी जितना अपने कर्तव्यों को। अतः वह जहाँ अपने कर्तव्य-पालन में पूर्ण सावधान थी वहाँ अपने अधिकारों की रक्षा के लिये भी सचेष्ट थी। इसी कारण जब जब पति-पत्नी में वाग्युद्ध

होता तो वह काफी तूमतड़ाम का होता था। दिन-दिन इस युद्ध की भीषणता बढ़ती जा रही थी। और अब तो बहुधा मार-पीट के बाद ही उसकी इति श्री होती थी। शराब पीकर उसके नशे में डाक्टर बहुधा बहुत गन्दी गालियाँ बक जाते थे। इन सब बातों से बेचारी छोटी सी बालिका को व्यर्थ ही अपने आँसू बहाने पड़ते थे।

इस प्रकार यह सुशिक्षित डाक्टर अपनी ही गृहस्थी में आग लगाकर उसी में ताप रहा था।

—※—

७

क्लब में बड़ी गर्मागर्मी बहस चल रही थी। यद्यपि अभी इने-गिने ही सदस्य उपस्थित थे। मायादेवी आज सब्जपरी बनी हुई थीं। वे जोश में आकर कह रही थीं—पतिव्रत धर्म स्त्रियों के सिर पर लादा हुआ बोझ है, अब समय आ गया है कि स्त्रियाँ उसे उतार फेकें।

सेठजी ने तपाक से कहा—"अजी गोली मारिये, पतिव्रत धर्म भला अब संसार में है ही कहाँ? यदि हजार दो हजार में कहीं एक में पतिव्रत धर्म दीख भी पड़ा तो उसकी गणना नहीं के समान है।"

इसपर डाक्टर ने छिपी नजर से मायादेवी की ओर देख कर कहा—"आपने शायद पतिव्रत धर्म पर ठीक-ठीक विचार नहीं किया। पतिव्रत धर्म का सम्बन्ध और स्वरूप, वह आध्यात्मिक पारलौकिक भावना है कि जिसका तारतम्य जन्म जन्मान्तरों तक हिन्दु-संस्कार में है, हिन्दू स्त्री जब तक यह समझती रहेगी कि जिस पति से मेरा सम्बन्ध हुआ है वह जन्म जन्मान्तर का संयोग है, और जन्म जन्मान्तर तक रहेगा, तो पतिव्रत धर्म की रूप-रेखा गम्भीर हो जाती है—

"परन्तु हजरत, आप एक बात मत भूलिये। स्त्री पुरुष का

सम्बन्ध कामात्मक है—प्रेमात्मक नहीं । क्योंकि प्रेम और काम दोनों साथ-साथ नहीं रह सकते ।"

"यह आपने खूब कही, भला प्रेम और काम दोनों साथ-साथ क्यों नहीं रह सकते ? कदाचित मैं एक डाक्टर की हैसियत से इस विषय को समझाने में अधिक सफल हो सकूँ ?

"ज़रूर ज़रूर, सेठजी ने आग्रहपूर्वक कहा। मायादेवी ने हंसकर कहा—"और मैं इस सम्बन्ध में आपको अपना प्रतिनिधि बनाती हूँ।"

"धन्यवाद, डाक्टर ने हंसकर कहा । फिर उसने गम्भीर भाव से कहना प्रारम्भ किया—"यदि इस सम्बन्ध में वैज्ञानिक दृष्टिकोण से विचार किया जाय तो आपका यह कहना कि प्रेम और काम साथ साथ नहीं रह सकते, ग़लत प्रमाणित होगा । यह सिद्धान्त भी ठीक नहीं है कि स्त्री पुरुष का सम्बन्ध कामात्मक है, प्रेमात्मक नहीं । 'काम' जो विशुद्ध शारिरिक उद्वेग है, उसकी पूर्ति के बाद नर-मादा अपरिचित रह जाते हैं, संसार के समस्त जीव जन्तु, जो केवल कामवृत्ति से मिलते हैं वे काम पूर्ति के बाद अपरिचित रह जाते हैं, केवल पुरुष और स्त्री ही अपने सम्बन्ध को अनुबाधित बनाये रह सकते हैं । इसके अतिरिक्त प्रेमतत्व का काम तत्त्व के साथ गम्भीर आवश्यकता इसलिये भी है कि काम सम्बन्ध एक ही काल में अनेक स्त्रियों से, एक पुरुष का और अनेक पुरुषों से एक स्त्री का हो सकता है । परन्तु प्रेम सम्बन्ध नहीं । प्रेम सम्बन्ध एक काल में एक स्त्री और एक ही पुरुष का

परस्पर हो सकता है। स्त्री और पुरुष के सम्बन्ध में समाज की एक मर्यादा भी है, इसलिये एक स्त्री और एक पुरुष का स्थिर सम्बन्ध रहना यह युग युगान्तर में अनुभव के बाद मनुष्य जाति ने सीखा और उससे लाभ उठाया है।

सेठजी ने कहा—आप की बात स्वीकार करता हूँ—परन्तु लैङ्गिक आकर्षण और लैङ्गिक तृप्ति से जो पारस्परिक प्रीति उत्पन्न होती है उसे प्रेम नहीं कहा जा सकता, यदि किसी स्त्री पुरुष के जोड़े की परस्पर काम तृप्ति होती रहती है तो उनमें प्रीति उत्पन्न हो जाती है, अर्थात् एक दूसरे के लिए रुचिकारक भोजन की भांति प्रिय हो जाते है। लोगों ने इसी का नाम 'प्रेम' रख लिया है।

डाक्टर ने हंसकर मायादेवी की तरफ देखा और कहा—"आप का यह कथन तो सर्वथा अवैज्ञानिक है। असत्य भी है। प्रेम वास्तव में एक विशुद्ध अध्यात्मिक वस्तु है, उसका सम्बन्व मन से है, और कामतत्व से उसका कोई प्रत्यक्ष अनुबन्ध नहीं है। यों जहां कहीं स्त्री और पुरुष का मिलना होता है, वहां काम तत्त्व का भी उदय होता है, लेकिन जहां काम है वहां प्रेम हो। काम तृप्ति का अभ्यास ही प्रेम है ऐसी बात नहीं है। देखिये, छोटे शिशुओं पर माता का प्रेम होता है, भाई-भाई में प्रेम होता है, यह प्रेमतत्त्व कामतत्व से बिल्कुल ही भिन्न एक वस्तु है। यह भी सम्भव है कि प्रेमतत्त्व कायम रहे और काम कायम न रहे। यह भी संभव है कि कामतत्त्व कायम रहे पर प्रेमतत्त्व कायम न रहे।

"वाह, यह आपने खूब कहा। अजी साहेब, आप जरा वात्स्यायन के कामशास्त्र को पढ़ें या होवेलिक एलिस के 'साइकोलॉजी आफ सेक्स को पढ़ें तो ऐसा कदापि न कहें।' सेठजी ने बड़े जोश के साथ कहा। वे मायादेवी पर अपनी विद्वत्ता की धाक जमाना चाहते थे। मायादेवी चुपचाप मुस्कुरा रही थीं।

उन्होंने कहा—तो फिर डाक्टर साहेब, आप पढ़ डालिये इन ग्रन्थों को इस बुढ़ापे में।"

डाक्टर ने जरा सा मुस्कुरा कर एक सिगरेट निकाल कर जलाया और धीरे से कहा—बहुत कुछ तो पढ़ चुका हूँ। मेरे दोस्त इन ग्रन्थों को जितना पूर्ण समझते हैं वे उतने नहीं हैं। सच पूछा जाये तो वात्स्यायन के ग्रन्थ की महत्ता तो उसकी प्राचीनता ही में है। आधुनिक कामशास्त्र में और भी नवीन महत्त्वपूर्ण बातों की खोज की है, जिनकी चर्चा उपर्युक्त दोनों ग्रन्थों में नहीं है। फिर, यह तो आप स्वीकर ही करते हैं कि पुरुष पुरुष में, स्त्री स्त्री में, मनुष्य और पशु में, मनुष्य और जड़ में भी प्रेम हो सकता है, उससे क्या यह बात प्रमाणित नहीं हो जाती कि काम और प्रेम दोनों पृथक् वस्तु हैं।

"किन्तु मीरा बाई ने मूर्ति से प्रेम किया और बाद में उस प्रेम की शक्ति से उस जड़ मूर्ति को चैतन्य बना लिया।" सेठजी ने कहा।

"अफसोस है कि आप इस अत्यन्त झूठी दकियानूसी बात

पर विश्वास करते हैं। कृपया इस बात का ध्यान रखिये कि एक वैज्ञानिक किसी विषय पर सामाजिक दृष्टिकोण से विचार नहीं कर सकता। अलबत्ता विज्ञान पर विचार करने का असर समाज पर अवश्य होता है।"

"छोड़िये ऐसा ही होगा। परन्तु मैं तो फिर मूल विषय पर आता हूँ। पातिव्रत धर्म का बन्धन कई शताब्दियों से न केवल हिन्दू स्त्रियों पर है, प्रत्युत मानव सभ्यता के प्रारम्भिक आर्य समुदाय में भी इसकी विशिष्टता स्वीकार की गई है। इतना ही नहीं प्राचीन अरबी-फारसियन, ग्रीक, लेटिन एवं अंग्रेजी साहित्य में भी इसकी काफ़ी चर्चा है, हाँ, यह सत्य है कि यह क्रमिक रूप से शिथिल सा हो रहा है, परन्तु यह रूढ़िवाद का नहीं, वस्तुवाद और विज्ञानवाद का ध्वंसावशेष माना जायगा। इसमें स्वार्थ पुरुषों का नहीं, स्त्रियों का है। क्योंकि यदि पातिव्रत धर्म के पालन में स्त्री को त्याग करना पड़े तो यह मानना ही पड़ेगा कि त्याग की भावना अभी तक यत्किंचित मानवता को कायम रख सकी है। भौतिक या सामाजिक दृष्टि से भी पातिव्रत अनावश्यक नहीं समझा जा सकता।

"अच्छा, तो अब आप मुझे चैलेञ्ज कर रहे हैं?" मायादेवी ने थोड़ा उत्तेजित होकर, सेठजी को घूर कर कहा।

"चैलेञ्ज नहीं कर रहा हूँ मायादेवी, एक सत्य बात कह रहा हूँ—सोचिये तो, स्त्री पुरुष में, इहलौकिक नहीं पारलौकिक भी सम्बन्ध है। यह पारलौकिक सम्बन्ध की विवेचना केवल साम्प्रतिक,

आध्यात्मिक, या मानविक वस्तु-परिस्थित पर नहीं की जा सकती है। जो नर नारी के शारिरिक सम्बन्ध को केवल 'काम' शब्द के व्यापक रूप मे ही समझना चाहते हैं, वे भूल करते हैं।"

"भूल कैसे करते हैं—सुनूँ तो?"

"निवेदन करता हूँ! यह तो आपको मानना पड़ेगा कि भौतिक अभिवृद्धि के लिए ही नारी में नारीत्व का उदय हुआ है।

"खैर, अब जरा अपना आध्यात्मिक दृष्टिकोण भी फरमा दीजिये।

"यदि आध्यात्मिक दृष्टिकोण से देखा जाय तो आप स्वीकार करेंगी कि न प्रेम में स्वार्थ है न काम में पाशविकता। पशु भाव की भावना से, काम में पाशविकता की और प्रेम के ऊपर स्वार्थपरता की छाया पड़ गई है। पर देखने से इसमें त्याग की प्रतिमूर्ति के भी दर्शन हो सकते हैं।"

"खाक दर्शन हो सकते हैं, कमाल करते हैं आप सेठजी! खैर आप स्त्रियों की आर्थिक दासता के विषय में क्या कहते हैं?"

"आर्थिक दासता से आपका क्या अभिप्राय है?"

"अभिप्राय साफ है। पहिले आप हिन्दू घरों की विधवाओं को ही लीजिये, चाहे वह किसी भी आयु की हों। जिस आसानी से मर्द पत्नी के मरने पर दुबारा ब्याह कर लेते हैं, उस आसानी से पति के मर जाने पर स्त्रियाँ ब्याह नहीं कर पातीं, यह तो आप देखते ही हैं।"

"बेशक, परन्तु मायादेवी, इसमें सिर्फ लज्जा, समाज का धर्म ही का बन्धन नहीं हैं और भी बहुत सी बातें हैं।"

"और कौन सी बातें हैं?"

"पहिली बात तो यही है कि जहाँ पुरुष ब्याहकर स्त्री को अपने घर ले आता है, वहाँ स्त्री ब्याह करके पति के घर आती है। ऐसी हालत में वह विधवा होकर यदि फिर ब्याह करना चाहे तो पति के परिवार से उसे कुछ भी सहायता और सहानुभूति की आशा नहीं रखनी चाहिये। रही पिता के परिवार की बात! पहिले तो माता-पिता लड़की की दुबारा शादी करना ही पाप समझते हैं, दूसरे, वे इसे अपने खानदान की तौहीनी भी समझते हैं, आमतौर पर यही ख्याल किया जाता है कि नीच जाति में ही स्त्रियाँ दूसरा ब्याह करती हैं। यदि उनकी लड़की का दुबारा ब्याह कर दिया जायगा तो उनकी नाक कट जायगी। तीसरे, वे ब्याह के समय 'कन्यादान' कर चुकते हैं और लड़की पर उनका तब कोई हक भी नहीं रह जाता। इसलिये यदि वे जब कभी ऐसा करने का साहस करते भी हैं तभी बहुधा पति के परिवार वाले विघ्न डालते हैं, क्योंकि इस काम में पिता के परिवार की अपेक्षा पति के परिवार वाले अधिक अपनी इज्जत-हतक समझते हैं।

डाक्टर ने बीच ही में बात काटकर कहा—"इसका कारण यह है सेठजी, कि स्त्रियों की न कोई अपनी सामाजिक हस्ती है, न उनका कोई अधिकार है। न उन्हें कुछ कहने या आगे बढ़ने का साहस ही है। इन्हीं सब कारणों से हिन्दू घरों में खासकर उच्च

परिवारों में स्त्रियाँ चाहे जैसी उम्र में विधवा हो जाँय, वे प्रायः ससुराल और पिता के घर में असहाय अवस्था ही में दिन काटती हैं।"

"यही बात है, जो मैं कहती हूँ"—मायादेवी ने उत्तेजित होकर कहा—"संयुक्त परिवार में पति की सम्पत्ति में से एक धेला भी नहीं मिल सकता। यदि वे उस परिवार के साथ रहें तो उन्हें रोटी कपड़े का सहारा मात्र मिल सकता है, इस रोटी कपड़े के सहारे का यह अर्थ है कि घर भर की सेवा-चाकरी करना, लाञ्छना और तिरस्कार सहना, सब भाँति के सुखों और जीवन के आनन्दों से वंचित रहना, सबसे पहिले उठना, सबसे पीछे सोना, सबसे पीछे खराब से खराब खाना खाना, और सबसे खराब पहनना। यही उनकी मर्यादा है—इस मर्यादा से यदि वे तनिक भी चूकीं तो अपमान, तिरस्कार, और व्यंग से उनकी जान ले डालते हैं। प्रायः उन्हें अपनी देवरानियों में दासी की भाँति रहना पड़ता है, जिनकी कभी वे मालकिन रह चुकी होती हैं। उनकी आबरू और चरित्र पर दाग लगाना एक बहुत साधारण बात है। और इसके लिये उसे बहुत सावधान रहना पड़ता है। पति का मर जाना उसका सब से बड़ा दुर्भाग्य समझा जाता है।"

डाक्टर ने चेहरे पर शोक-मुद्रा लाकर कहा—"निस्संदेह यह बड़े ही दुःख की बात है—यह उनका दुर्भाग्य नहीं हमारी सारी जाति का दुर्भाग्य है। माया देवी ने कहा—"अभी तो मैंने यह

उनके पति के घर की बात कही है, पिता के घर का भी तो हाल सुनिये—यदि विधवा छोटी अवस्था की हुई तो वह प्रायः पिता के घर ही अधिक रहती है। यदि सुसराल वाले शरीफ हुए तो माता पिता उसपर दया और स्नेह तो अवश्य करते हैं, परन्तु उसे देखकर दुखी रहते हैं, किन्तु कठिनाई तो तब आती है जब वह अधिक आयु की हो जाती है, माता-पिता, सास ससुर मर जाते हैं, सुसराल में देवर देवरानियों का और पीहर में भाई भावजों का अकण्टक राज्य रहता है, तब वह सर्वत्र एक भार, एक पराई चीज, एक घृणा और तिरस्कार, क्रोध और अपमान की पात्री भर रह जाती है। उसके दुख दर्द को कोई न समझता है, न उसकी परवाह करता है। संसार के सब सुखों और मानवीय अधिकारों से वह वंचित है।"

डाक्टर ने सहानुभूति-सूचक स्वर में कहा—निस्संदेह माया देवी, ऐसी अवस्था में यह बात गम्भीरता से सोचने योग्य है कि ऐसे कौन-कौन उपाय काम में लाये जांय जिनसे स्त्रियों की यह असहायावस्था दूर हो।

सेठ जी अब तक चुप बैठे थे—उन्होंने कहा—"डाक्टर साहेब आप ने ऐसे कुछ उपाय सोचे हैं ?"

"क्यों नहीं, मैं तो सदैव से इन विषयों में दिलचस्पी रखता हूँ। फिर मायादेवी की धार्मिक बातें भी भुलाने के योग्य नहीं हैं। मेरी राय में राहत मिलने के कुछ उपाय हैं। पहिला तो यह

कि—विवाह के समय में माता-पिता अधिक से अधिक दहेज दें। और वह दहेज की शकल में हो—गहना कपड़ा बर्तन आदि नहीं, और उसपर लड़की ही का अधिकार हो—सुसराल वालों का तथा उसके पति का भी न हो। वह रकम एक पेड पालिसी की तौर पर इस भाँति दी जाय कि उसे वह लड़की भी चाहे तो खुद खर्च न कर सके, न पति आदि के दबाव में पड़ कर उसे दे सके। यह रकम ब्याज सहित उसे या तो ब्याह के बीस वर्ष बाद जब कि वह प्रौढ़ और समझदार हो जाय तब मिले या फिर विधवा होने पर, कुछ शर्तों के साथ—जिससे उस रकम का वह पूरा लाभ उठा सके और उसे कोई ठग न सके।

मायादेवी ने समर्थन करते हुए कहा—निस्संदेह ऐसा ही होना चाहिए। परन्तु सेठजी ने आपत्ति उठाई कि यह तो आप दहेज की प्रथा का समर्थन कर रहे हैं जिसका विरोध सभी सुधारवादी करते हैं।

"मैं स्वीकार करता हूँ कि आजकल दहेज की प्रथा की ओर लोगों के विरोधी भाव पैदा हो गये हैं। परन्तु इसका कारण यह है कि दहेज की प्रथा के असली कारण को लोग नहीं समझ पाए हैं। दहेज को, पति या उसके ससुराल वाले अपनी बपौती समझते और उसे हड़प लेते हैं, जो वास्तव में अत्यन्त अनुचित है। दहेज की रकम वास्तव में लड़की की सम्पत्ति ही माननी चाहिये, उसी का उसपर अधिकार भी होना चाहिए।"

"यह भला कैसे हो सकता है ?" सेठजी ने तर्क उठाया।

"क्यों नहीं हो सकता"—मायादेवी ने तपाक से कहा—"लड़कों की भांति क्या लड़कियाँ भी अपने माता-पिता की सन्तान नहीं हैं ? उन्हें क्या माता-पिता की संपत्ति में हिस्सा न मिलना चाहिए ? हिन्दू-कानून में लड़की को पिता की सम्पत्ति में कुछ नहीं मिलता। सब पुत्री का ही होता है। इसलिए पिता के धन का कुछ भाग लड़की को दहेज के रूप में मिलना ही चाहिए। यह न्याययुक्त भी है।

डाक्टर ने कहा—मायादेवी सत्य कहती हैं।

"खैर, यह हुई एक बात। दूसरी बात क्या है, वह भी कहिये।"

"दूसरी बात यह कि विवाह के समय जेवर और नकदी के रूप में ससुराल से भी उसे कुछ मिलना चाहिए। यह धन उसी का ही है। जैसे दहेज का धन पुत्री का धन है उसी प्रकार सुसराल का का यह दान, स्त्री-धन है। इसे उससे कोई अपहरण न करे। दहेज की भाँति आजकल जेवर आदि की ठहरानी को भी निन्दनीय ठहराया जाता है। परन्तु उसका कारण यही हैं कि लड़की का उस धन पर कोई अधिकार नहीं होता। यह तय होना चाहिये कि जो जेवर नकदी अधिक से अधिक सुसराल वाले अपनी सामर्थ के अनुसार दे सकते हैं, वह उस स्त्री का धन हो चुका और वह विधवा होने पर उसी के द्वारा अपना गुजर-बसर कर सकती है। अतएव अधिक से अधिक यह हो सकता है कि फिर ब्याह होने

की हालत में सुसराल का यह धन उसे लौटा दिया जाय। परन्तु यदि स्त्री की आयु पचीस साल से ऊपर हो चुकी हो, एकाध संतान भी उसकी हो गई हो तो खाने पीने और सुख सम्मान से रहने का उसे सुभीता हो तो वह दूसरा व्याह न करे।"

"यह हुई दूसरी बात, विचारने योग्य है, अच्छा तीसरी बात क्या है?"

"तीसरी बात यह कि विवाह के समय कन्यादान में सगे सम्बन्धी इष्ट-मित्र बहुत कुछ कन्या को नकदी अर्पण करते हैं। विदाई के समय में भी ऐसा ही होता है। रिवाज के अनुसार यह सब रकम दूल्हा महाशय हड़प जाते हैं, परन्तु वह रकम भी स्त्री-धन होना चाहिये।"

"बस, या और कुछ।"

"हां, हां, अभी तो कई मद हैं, बहू जब ससुराल आती है, तब उसे मुँह दिखाई, पैर पड़ाई आदि अवसरों पर भी बहुत कुछ भेंट मिलती है, वह भी उसी का धन होना चाहिये। और यह रकम सुरक्षित रूप से उसके नाम कहीं जमा रहनी चाहिए जो आड़े वक्त पर काम आवे। या तो उसकी पेड-अप-पालिसी खरीद ली जाय या और कोई ऐसी व्यवस्था कर ली जाय जिसमें उस रकम के मारे जाने का भय ही न हो।"

मायादेवी ने डाक्टर को बहुत-बहुत साधुवाद देकर कहा—"बेवो डाक्टर, इस योजना को अवश्य अमल में लाना चाहिए।"

"जरूर, जरूर, परन्तु मायादेवी, अभी तो इस सम्बन्ध में

बहुत-सी गम्भीर बातें हैं, मसलन देश की परतन्त्रता में स्त्रियों का कितना हाथ है, क्या कभी किसी ने इसपर भी विचार किया है ?"

"नहीं, आप इस सम्बन्ध में क्या कहना चाहते हैं ?" सेठजी ने कहा।

डाक्टर ने कहा—"बहुत कुछ, पुरुष चाहे जैसा वीर हो स्त्री के सामने उसकी वीरता हार खाती है, शास्त्रों में जहाँ स्त्री को अबला कहा है वहाँ वे चण्डिका भी बन जाती हैं।"

मायादेवी उत्साह से बोलीं—"बेशक, जनाब, स्त्रियों की प्रकृति जल के समान है, जो शान्त रहने पर तो अत्यन्त शीतल रहता है परन्तु जब जल में तूफान आता है तो वह ऐसा भयंकर हो जाता है कि बड़े-बड़े भारी जहाज भी टुकड़े-टुकड़े हो जाते हैं।"

"मेरा तो खयाल ऐसा है, कि स्त्रियाँ यदि सुधर जाँय तो देश की बहुत उन्नति हो।"

"अजी आप यही सोचिए कि वे बच्चों की माताएं हैं। उन्हें ढालने के साँचे हैं, वे बच्चों की गुरु हैं, यदि वे योग्य न होंगी तो बच्चे योग्य हो ही नहीं सकते। बच्चे यदि अयोग्य हुए तो कुल मर्यादा नष्ट हुई समझिए।"

"परन्तु हमारे देश की तो यह हालत है कि स्त्रियाँ पाँच छः बच्चे पैदा कर लें और बूढ़ी होकर बैठी रहें। उन्हें पुरुष चाहे जितना अपमानित करता जाय, उन्हें उससे कोई वास्ता ही

नहीं, पीटें तो पीट भी लें। रात दिन घर के धन्धे में जुती रहें।"—मायादेवी एक साँस ही में कह गईं।

डाक्टर ने कहा—"निःसंदेह यह एक आपत्ति जनक बात है ?"

"अजी, इस गरीब और भूखे नंगे देश में स्त्रियों को अपने सुधार की बात सोचने का अवसर ही कब मिलता है ? एक जमाना था जब चित्तौर की क्षत्राणियों ने अपने पुत्रों, भाइयों और स्त्रियों को देश के शत्रुओं से युद्ध करने के लिए उनकी कमर में तलवारें बाँधी थीं, एक बात में हम कह सकते हैं कि स्त्रियों के हाथ से देश जिया और इन्हीं के बल पर मर मिटेगा।

"परन्तु आज तो लोग स्त्रियों को पैर की बेड़ियाँ समझते हैं। वे सोचते हैं मेरे पीछे स्त्री है, बच्चे हैं, कौन इन्हें सहारा देगा। गोया स्त्री एक मिट्टी का लौंदा है, एक निर्जीव पिण्डकी, जिसकी रक्षा के लिये पुरुषों को अपने सभी कर्तव्य छोड़ने पड़ते हैं।"—सेठजी यह कहकर तीखी नजर से मायादेवी की ओर ताकने लगे।

"अहा, हे माताओं, तुमने अब वीर पुत्रों को उत्पन्न करना छोड़ दिया, तुम शृंगार करके सज-धजकर बैठ गईं, लोहे के पिंजरे में, तुम गहने कपड़ों के ऊल-जलूल झगड़ों में उलझकर बैठ गईं। और पुरुषों को इसी उद्योग में फँसा रखा कि वह तुम्हारी आवश्यकताओं को जुटाने में मर मिटे। जीवन के सारे ध्येय पीछे रह गये।"

मायादेवी ने कहा—"इसके लिये भी पुरुष ही दोषी हैं। यदि

वे स्त्रियों को अपनी वासना का गुलाम बनाए रखने के लिये उन्हें घरों की चहार दीवारी में बन्द न रखते तो आज आपको ऐसा कहने का अवसर न आता। अब भी समय है कि आप चेत जायँ और स्त्रियों को समाज में समान अधिकार दें, जिससे वे देश के उत्थान में आपका हाथ बटायें।"

"श्रीमती मायादेवी के इस कथन के समर्थन में मैं इस बोतल में बची हुई लालपरी के तीन समान भाग करता हूँ। जिससे दुनियाँ समझे कि अब पुरुष स्त्रियों को समान अधिकार दे रहे हैं।" इन शब्दों के साथ डाक्टर ने तीन गिलास भरे। और एक एक गिलास दोनों साथियों के आगे बढ़ाया।

सेठजी ने हँसकर गिलास उठाते हुए कहा—"मैं सादर आपका अनुमोदन करता हूँ।"

"और मैं भी कब पीछे हटने वाली हूँ"—यह कहकर मायादेवी गटा-गट गिलास से गला तर करने लगीं। ऐसा ही उसके दोनों साथियों ने भी किया। अन्त में डाक्टर ने एक संकेत किया, और मायादेवी साथियों से विदा लेकर चल दीं। पीछे ही पीछे डाक्टर भी क्लब से विदा हुए।

—:❀:—

७

आजाद महिला संघ की अध्यक्षा श्रीमती मालतीदेवी चालीस साल की विधवा थीं अपने पति महाशय के साथ उन्होंने तीन बार सारे योरोप में भ्रमण किया था। वह योरोप की तीन-चार भाषाएँ अच्छी तरह बोल सकती थीं। उनका स्वास्थ्य और शरीर का गठन बहुत अच्छा था। चालीस की दहलीज पर आने पर भी वे काफी आकर्षक थीं। मिलनसार भी वे काफी थीं। पति की बहुत बड़ी सम्पत्ति की वे स्वतन्त्र मालकिन थीं। विदेश में ही स्त्रियों की स्वाधीनता को देखकर उन्होंने भारत की सारी स्त्रियों को स्वाधीन करने का बीड़ा उठाया था। और भारत में आते ही आजाद महिला संघ का सूत्रपात आरम्भ कर दिया था। इस आन्दोलन से उनकी जान पहिचान बहुत बड़े बड़े लोगों से तथा परिवारों में हो गई थी। उनकी बातें और बात करने का ढंग बड़ा मनोहर और आकर्षक था। दाँतों की बतीसी यद्यपि नकली थी, पर जब वे अपनी मादक हँसी हँसती थीं तब आदमी का दिल बेबस हो ही जाता था। भिन्न भिन्न प्रकृति और स्थिति के व्यक्तियों को मोहकर उन्हें अपने अनुकूल करने की विद्या में वे खूब सिद्ध-हस्त थीं।

मायादेवी की एक सहेली ने उनसे मायादेवी का परिचय कराया था और वहीं डाक्टर से उनकी मुलाकात हुई थी। जो अब बढ़ते बढ़ते मित्रता की सीमा को भी पार कर चली थी। मायादेवी मालतीदेवी पर जी जान से लट्टालोट थीं। वे हर बात में उन्हें आदर्श मान उन्हीं के रंग ढंग पर अपना जीवन ढालती जाती थीं। परन्तु, मालतीदेवी के समान न तो वह विदुषी थी, न स्वतन्त्र। उनके पति की उम्र भी साधारण थी। अतः ज्यों-ज्यों मायादेवी मालती की राह पर चलतीं गईं, त्यों-त्यों असुविधाएँ उनकी राह में बढ़ती ही गईं। खर्च और रुपये पैसे के मामले में उनकी बहुधा पति से झगड़ा होने लगता। उनका अधिक समय आजाद महिला संघ में, मालतीदेवी की मुसाहिबी में, या डाक्टर साहेब के सामिप्य में गुजरता। घर से वह प्रायः बाहर रहतीं। इससे उनकी घर गिरस्थी बिगड़ती चली गई। और इसी मामले पर पति पत्नी की खटपट रोज रोज होने लगी। परन्तु जब उसके बढ़े हुये खर्चे में पति की सारी तनखाह भी खत्म होने लगी—और रोज के खर्चे का झंझट बढ़ने लगा तब तो मास्टरजी का भी धैर्य छूट गया। और अब असन्तोष और गृह-कलह ने बुरा रूप धारण कर लिया। परन्तु पति के सौजन्य और नर्मी का विमलादेवी गलत लाभ उठाती चली गईं। उनकी आवारा गर्दी, बेरुखाई, फजूल खर्ची और विवाद की भावनाएँ बढ़ती ही चलीं गईं। उसे कर्ज लेने की भी आदत पड़ गई। डाक्टर के सामने भी उसने हाथ पसारना प्रारम्भ कर दिया।

इससे डाक्टर की बन आई, और वह मायादेवी को नैतिक पतन के गढ़े में अधिक सफलता से खींच ले गए।

अन्त में एक दिन मायादेवी और मालती की मूँ दर मूँ बातचीत हुई।

मायादेवी ने कहा—श्रीमती मालतीदेवी मैं आपका परामर्श चाहती हूँ। मैं अपने इस जीवन से ऊब गई हूँ। आप मुझे सलाह दीजिये कि मैं क्या करूँ।

मालती ने उससे सहानुभूति प्रदर्शित करते हुए कहा—"मेरी तुमसे बहुत सहानुभूति है, और मैं तुम्हारी हर तरह सहायता करने को तैयार हूँ।"

"तो कहिये—मैं कब तक इन पुरुषों की गुलामी सहन करूँ।"

"मत सहन करो बहिन, पच्छिम से तो स्वाधीनता का सूर्य उदय हुआ है। तुम स्वाधीन जीवन व्यतीत करो। जीवन बहुत बड़ी चीज है, उसे यों ही नहीं बर्बाद किया जा सकता।"

"यही मैं कहती हूँ और यही चाहती भी हूँ, पर समझ नहीं पा रही हूँ कि कैसे अगला कदम उठाऊं।"

"तुम आजाद महिला संघ की सदस्या हो, तुम्हारे विचार बड़े सुन्दर हैं, संघ तुम्हें सब तरह से मदद करेगा। संघ तुम्हें जीवन देगा, मुक्ति देगा। बहिन, हम जीवन चाहती हैं। सच्चा, स्वाधीनता का जीवन, जिसका हमें जन्मसिद्ध अधिकार है, वह हमें संघ में मिल सकता है।

"देखिये, वे स्कूल चले जाते हैं, तो मैं दिन भर घर में पड़ी पड़ी क्या उनका इन्तजार करती रहूँ या उनके बच्चे की शरारत के खीझती रहूँ। यह तो कभी आशा ही नहीं की जा सकती कि वे मेरे लिए कोई साड़ी लायेंगे या कोई गहना बनवायेंगे। आयेंगे भी तो गुमसुम, उदास मुँह बनाये। आदमी क्या हैं बीसवीं के कीड़े हैं। मालतीदेवी, क्या कहूँ उन्होंने कुछ ऐसी ठण्ढी तबियत पाई है कि क्या कहूँ। मुझे तो अपनी मिलने वालियों में उन्हें अपना पति कहने में शर्म लगती है।"

"हिन्दुस्तान में हजारों स्त्रियों की दशा तुम्हारी ही जैसी है बहिन। इससे उद्धार होने का उपाय स्त्रियों का साहस ही है।"

"मैं तो अब इस जीवन से ऊब गई हूँ। भला यह भी कोई जीवन है? नर्क है नर्क! सिर्फ मैं हूँ जो सहती हूँ।"

"मत सहो बहिन, मत सहो। अपने आत्म-सम्मान को, अधिकारों को, स्वाधीनता की रक्षा करो।"

"परन्तु किस तरह, कैसे मैं इस बन्धन से मुक्ति पा सकती हूँ।"

"हिन्दू कोड बिल तुम्हारे लिये आशीर्वाद लाया है, नई जिन्दगी का संदेश लाया है। यह तुम्हारी ही जैसी देवियों के पैरों में पड़ी परतन्त्रता की बेड़ियों को काटने के लिये है। इससे तुम लाभ उठाओ।"

"परन्तु हमारा सबसे बड़ा मुकाबिला तो हमारी आर्थिक पराधीनता का है, माना कि कानून का सहारा पाकर हम वैवाहिक

बन्धनों से मुक्त हो जायँ, परन्तु हम खायेंगी क्या? रहेंगी कहाँ? करेंगी क्या? हम स्त्रियाँ तो जैसे कटी हुई पतंग हैं, हमारा तो कहीं ठौर-ठिकाना है ही नहीं।"

"उसका भी बन्दोबस्त हो सकता है। पहिली बात तो यह है कि हिन्दूकोडबिल जब तुम्हें मुक्तिदान देगा तो तुम्हारे सभी बन्धन खोल देगा। तुम्हें सब तरह आजाद कर देगा। पहिले तो हिन्दू स्त्रियां पति से त्यागी जाकर पति से दूर रहकर भी विवाह नहीं कर सकती थीं, परन्तु अब तो ऐसा नहीं है। तुम मन चाहे आदमी से शादी कर सकती हो। अपनी नई गृहस्थी बना सकती हो, अपना नया जीवन साथी चुन सकती हो। इसके अतिरिक्त तुम पढ़ी लिखी शोशल महिला हो, तुम्हें थोड़ी भी चेष्टा करने से कहीं न कहीं नौकरी मिल सकती है। तुम बिना पति की गुलाम हुये बिना विवाह किये, स्वतन्त्रता पूर्वक अपना जीवन व्यतीत कर सकती हो।"

"तो श्रीमती मालती देवी क्या आप मेरी सहायता करेंगी। क्या आपके आसरे मैं साहस करूँ? मैं तो बहुत डरती हूँ। समझ नहीं पाती कि क्या करूँ।"

"आरम्भ में ऐसा होता है, पर बिना साहस किये तो पैर की बेड़ी कटती नहीं बहिन! तुम जब तक स्वयं अपने पैरों पर खड़ी न होगी तब तक दूसरा कोई तुम्हें क्या सहारा देगा।"

"तो आप बचन देती हैं कि आप मेरी मदद करेंगी?"

"जरूर करूँगी।"

"लेकिन कानूनी झंझट का क्या होगा?"

"मेरे एक परिचित वकील हैं, मैं तुम्हें उनके नाम परिचय-पत्र देती हूँ, उनसे मिलने से मैं आशा करती हूँ तुम्हारी सभी कठिनाइयां हल हो जावेगीं ?"

"अच्छी बात है—तो मैंने भी अपनी ठान ठान ली है।"

"मैं तुम्हारा अभिनन्दन करती हूँ माया देवी, मैं चाहती हूँ तुम भी पुरुषों की दासता में फँसी दूसरी हजारों स्त्रियों के लिये एक आदर्श बनो। साहसिक कदम उठाओ। और नई दुनियां की स्त्रियों की पथप्रदर्शिका बनो। मैं तुम्हारे साथ हूँ।"

"धन्यवाद मालती जी; आपका साहस पाकर मुझे आशा है, अब मुझे कोई भय नहीं। मैं अपने मार्ग से सभी बाधाओं को बलपूर्वक दूर करूँगी।"

"अवश्य अवश्य।"

"नमस्ते।"

"नमस्ते।"

—:⁂:—

८

विनोद को बड़ा तेज बुखार चढ़ा था। मास्टर हर प्रसाद उसे गोद में लिये बैठे, उसे तसल्ली दे रहे थे। पर उसने माताजी की रट लगा रक्खी थी। न दवा पीता था, न दूध। केवल माताजी-माताजी चिल्ला रहा था।

रात के दस बज गये थे और मायादेवी अभी तक नहीं लौटी थीं। सुबह जब वे जाने लगी थीं, तब भी विनोद को बुखार था। परन्तु उन्होंने उसका कुछ ध्यान नहीं किया। मास्टर के कहने को भी नहीं सुना। लाचार मास्टर जी को छुट्टी लेनी पड़ी। दिन भर दोनों पिता-पुत्र मायादेवी की प्रतीक्षा करते रहे। परन्तु मायादेवी का कहीं भी पता न था।

मास्टर हर प्रसाद का भी धैर्य साथ छोड़ बैठा। उन्होंने आप ही आप बड़बड़ाकर कहा—"बड़ी आफत है, आजाद महिला संघ की आजादी का तो इन पढ़ी-लिखी बेवकूफ स्त्रियों पर ऐसा गन्दा प्रभाव हुआ है कि वे घर से बेघर होने ही में अपनी प्रतिष्ठा समझती हैं। उन्होंने एक बार चश्मे से घूरकर ज्वर में छटपटाते पुत्र को देखा।

बालक ने अपने सूखे होठों पर जीभ फेरते हुए कहा—"बाबूजी, अम्मा आईं!"

"अब आती ही होंगी बेटे, लो तुम यह दवा पी लो।"

"नहीं पीऊँगा।"

"पीलो बेटे, दवा पीने से बुखार उतर जायगा।"

"अम्मा के हाथ से पीऊँगा।"

"बेटा, अभी मेरे हाथ से पी लो, पीछे अम्मा आकर पिला देंगी।"

"वह कब आवेंगी बाबूजी, मैं उनसे नहीं बोलूँगा, रूठ जाऊँगा।"

"नहीं बेटे, अच्छे लड़के अम्मा से नहीं रूठा करते। लो दवा पी लो।"

उन्होंने धीरे से बालक को उठाकर दवा पिला दी। और बालक को लिटाकर चुपके से अपनी आँखें पोंछी।

और एक घण्टा बीत गया। मायादेवी आई। और बिना पुत्र और पति की ओर देखे, सीधे अपने कमरे में चली गई। कुछ देर तो मास्टर जी ने प्रतीक्षा की। बालक सो गया था। वे उठकर पत्नी के कमरे के द्वार पर गए और धीरे से कहा—विनोद की मां, विनोद सुबह ही से बेहोश पड़ा है, तुम्हारी ही रट बेहोशी में लगाए है, आओ तनिक उसे देखो तो।

"भाई, मैं बहुत थकी हूँ, जरा आराम करने दो।"

"उसे बड़ा तेज बुखार है।"

"तो दवा दो, मैं इसमें क्या कर सकती हूँ, मैं कोई वैद्य, डाक्टर भी तो नहीं हूँ।"

"लेकिन माँ तो हो।"

"माँ बनना पड़ा तो काफी गू-मूत कर चुकी। अब और क्या चाहते हो?"

"विनोद की माँ, वह तुम्हारा बच्चा है।"

"तुम्हारा भी तो है।"

"मास्टर जी को गुस्सा आ गया। उन्होंने कहा—"किन्तु बच्चों की देखभाल तो माँ ही कर सकती है।"

"पर बच्चे माँ के नहीं, बाप के हैं। उन्हें ही उनकी सम्हाल करनी चाहिये।"

"यह तुम कौन सी बात कर रही हो विनोद की माँ, जरा लड़के के पास आओ।"

"भाड़ में जाय तुम्हारा लड़का। मेरी जान मत खाओ।"

मास्टर अवाक् रह गये। उन्हें ऐसे उत्तर की आशा न थी। उन्होंने कुछ रुक कर कहा—"तुम ऐसी हृदय हीन हो विनोद की माँ।"

मायादेवी सिंहनी की भाँति तड़प उठीं। उन्होंने कहा—मैं जैसी हूँ, उसे समझ लो—मेरी आँखे खुल गई हैं। मैं अपने अधिकारों को जान गई हूँ। मैं भी आदमी हूँ, जैसे तुम मर्द लोग हो। मुझे भी तुम-मर्दों की भाँति स्वतंत्र रहने का अधिकार है। मैं तुम्हारे लिये बच्चे पैदा करने, उनका गू मूत उठाने से इन्कार

करती हूँ। तुम्हारे सामने हाथ पसारने से इन्कार करती हूँ। मैं जाती हूँ। तुम्हें बलपूर्वक मुझे अपने भाग्य से बांध रखने का कोई अधिकार नहीं है।

वह तेजी से उठकर घर के बाहर चल दी। मास्टर साहब भौंचक मुँह बाए खड़े के खड़े रह गये।

—०:※:०—

१०

घर से बाहर आते ही थोड़ी दूर पर मायादेवी को एक खाली तांगा दीख पड़ा और वह उसपर सवार हो गईं। जब तांगे वाले ने पूछा कि, कहां-चलूँ? तो मायादेवी क्षणभर के लिये असमंजस में पड़ गईं। झोंक में आकर जो उन्होंने घर त्यागा था, तब खून की गर्मी में आगा पीछा कुछ भी नहीं सोचा था—अब वह एका-एक यह निर्णय न कर सकी कि कहाँ चलें। पहिले उनकी इच्छा हुई कि डाक्टर के यहाँ चलें, परन्तु फिर यह उन्हें उचित प्रतीत न हुआ। पहिले यही बात उनके मन में तीव्र थी, परन्तु अब उस मानिनी को ऐसा करना अपमानजनक लगने लगा। फिर उन्होंने आजाद महिला संघ में जाने की सोची, पर इस समय ऐसा भी वह न कर सकीं। अभी उन्हें घर छोड़े केवल कुछ क्षण ही व्यतीत हुये थे। पर इतने ही में वह ऐसा अनुभव करने लगी कि उसकी सारी ही गरीमा समाप्त हो चुकी है। और अब वह पृथ्वी पर अकेली है। उसका मन गहरी उदासी से भर गया। सोच विचार कर उसने मालती देवी के घर जाने का निश्चय किया-और वहीं जाने का तांगे वाले को आदेश दिया।

मालती देवी ने माया का स्वागत तो किया, पर माया ने

तुरन्त ही ताड़ लिया कि उसका यों सिर पर आ पड़ना मालती को रुचिकर नहीं हुआ है।

रात माया ने बड़ी चिंता में काटी। प्रातःकाल मालती के परामर्श से माया देवी ने वकील से मुलाक़ात की। वकील साहब का नाम नवनीत प्रसाद था। बातचीत के मीठे और फ़ीस वसूलने में रूखे। कानून में अधूरे और बकवाद में पूरे। सब बातें सुनकर वकील साहेब ने कहा—हाँ, हाँ, आप के विचार बड़े कल्चर्ड हैं श्रीमती जी। अब पुरुषों की अधीनता में पिसने की क्या आवश्यकता है, फिर हिन्दू कोडबिल पास हो ही गया है। कानून सर्वथा आपके पक्ष में है, हाँ फीस का सवाल है।

"फीस आप जो चाहेंगें, वही मिल जायगा। उसकी आप चिन्ता मत कीजिये, परन्तु आप पक्के तौर पर तलाक दिला दीजिये।"

"पक्के तौर पर ही श्रीमती जी, पक्के तौर पर। मैं तो कच्चा काम करता ही नहीं। सारी अदालत यह बात जानती है। हाँ फीस की बात है। फ़ीस तो आप लाई होगीं ?"

मायादेवी ने पचास रुपये के नोट वकील साहेब की मेज़ पर रखते हुए कहा—अभी यह लीजिये पचास रुपये। बाकी आप जो कहेंगे और दे दिये जायेंगे। मैं श्रीमती मालती देवी के कहने से आई हूँ, आपकी फ़ीस मारी नहीं जायगी।

"श्रीमती जी, मालतीदेवी एक कल्चर्ड लेडी हैं। जब वे हमारे

आप के बीच में हैं; तो फिर मामला ही दूसरा है,। रुपये उठाकर उन्होंने मेज की दराज में रखे। और मालती देवी से कुछ प्रश्न पूछकर नोट करने के बाद कहा—'अच्छी बात है, मैं रात को कानून की किताबें देख भाल कर मसविदा तैयार कर लूँगा। कल अदालत में आपका बयान भी हो जायगा।"

"किन्तु देखिये, ऐसा न हो कि कोई झगड़ा झंझट खड़ा हो जाय। आगा पीछा सब आप देख भाल लीजिये।

"मैंने तो आप से कह ही दिया कि मैं कच्चा काम नहीं करता। आप किसी बात की चिन्ता न कीजिए। कानून आपके पक्ष में है और मैं आप की सेवा में। सिर्फ फीस का सवाल है। सो उसकी बात तो आप कहती ही हैं—कि मैं बेफिक्र रहूँ"

"जी, बिल्कुल बेफिक्र रहिये।"

"तो आप भी बेफिक्र रहिये। तलाक हो जायगा। हाँ, क्या आप अपने पति से कुछ हर्जाना भी वसूल करना चाहती हैं?"

"जी नहीं, मैं सिर्फ तलाक चाहती हूँ।"

"ठीक है, ठीक है—एक बात और पूछना चाहता हूँ। आप यदि नाराज न हों तो अर्ज करूँ?"

"कहिये।"

"देखिये, स्त्री जाति की जवानी का मामला बड़ा ही नाजुक होता है, दुनियाँ में बड़े-बड़े दरख़्त हैं, न जाने कब कैसी हवा लग जाय, कब ऊँचा नीचा पैर पड़ जाय।"

"आप का मतलब क्या है?"

वकील साहेब ने सिर खुजाते हुए कहा—"जी मतलब—मतलब यही कि आप जैसी कल्चर्ड, सुन्दरी युवती को एक आड़ चाहिये।

"आड़ ?"

"जी हाँ, मेरा मतलब है सहारा।"

"आप अपना मतलब और साफ-साफ कहिये।"

वकील साहेब अपनी गंजी खोपड़ी सहलाते हुए बोले—"ओफ, आप समझीं नहीं। लेकिन, जहाँ तक मेरा ख्याल है, शादी तो आप करेंगी ही।"

"इससे आप को क्या मतलब ?"

"जी, मतलब तो कुछ नहीं। परन्तु मैं शायद आप की मदद कर सकूँ।"

किस विषय में ?"

"शादी के विषय में, मैं एक ऐसे योग्य पुरुष को जानता हूं जो आप ही के समान कल्चर्ड विचारों का है, सभ्य पुरुष है, खुशहाल है, समझदार है। हाँ उम्र जरा खिंच गई है, पर मर्द की उम्र क्या, पर्स देखना चाहिये। वह पुरुष खुशी से आप जैसी कल्चर्ड महिला से शादी करने को तैयार हो जायगा।"

मायादेवी ने घृणा से होठ सिकोड़ कर गंजे वकील की ओर देखा और कहा—

"आप कैसे कह सकते हैं कि वह तैयार हो जायगा, दूसरे के दिल की बात आप जान कैसे सकते हैं ?"

"खूब जानता हूँ देवी जी, मैं दावे से कह सकता हूँ कि वह आप पर मर मिटेगा।"

"तो वह मर मिटने वाले शायद आप ही हैं।" मायादेवी ने भ्रूभंग करके कहा।

"ही, ही, आप भी कमाल की भांपने वाली हैं, मान गया। अब जब आप समझ ही गई हैं, तो फिर कहना ही क्या। मैं सिर्फ इतना कह सकता हूँ कि आप एक दिलवाला पति पा सकेंगी।"

"खैर देखा जायगा, अभी तो आप जो मामले की बात है उसी का ध्यान कीजिये। इस मसले पर पीछे गौर कर लिया जायगा।"

"तब तो श्रीमती जी फीस का मसला ही खत्म"—"आप चाहें तो ये पचास रुपये भी लेती जाइये।"

"अभी उन्हें रखिये। शायद आप को अभी जरूरत पड़ जाय। तो मैं आप के पास कल कचहरी में मिलूँ?"

"कचहरी में क्यों, यहीं आइये। हम लोग साथ-साथ चाय पियेंगे, काम की बातें करेंगे, एक दूसरे को समझेंगें, समझती हैं न आप?"

"खूब समझती हूँ, आप एक दिलफेंक वकील हैं, ठीक है न।"

"कमाल करती हैं आप। क्या साफगोई है। मान गया। तो पक्की रही, आप आ रही हैं न कल।"

"मैं कचहरी ही में मिलूँगी, आप सब कागजात तैयार रखिये।

"लेकिन मेरी दर्खास्त..." वकील साहेब ने बेचैनी से कहा—

मायादेवी ने उठते हुए कहा—"पहिले मेरी दर्खास्त की कार्यवाही हो जाय तब।"

वकील साहेब हँस पड़े। "अच्छा, अच्छा, यह भी ठीक है।" उन्होंने कहा।

मायादेवी नमस्ते कह विदा हुईं।

—:※:—

११

मास्टर हर प्रसाद ने वह रात बड़े कष्ट और उद्वेग से काटी। रुग्ण बालक को छोड़कर वे रात में कहीं जा भी नहीं सकते थे। और मायादेवी का इसप्रकार चला जाना उनके लिये एक असंभावित घटना थी। इसकी उन्होंने कभी कल्पना भी न की थी। वे एक उदार विचारों के तथा शान्त प्रकृति के सज्जन सद् गृहस्थ थे, इसी से उन्होंने अपनी पत्नी को इतनी स्वतन्त्रता भी दे रखी थी। उसका परिणाम ऐसा घातक होगा—जिससे उनकी गृहस्थी ही में आग लग जायगी, यह उन्होंने नहीं सोचा था। इधर कुछ दिन से मायादेवी के व्यवहार, आचरण उनके लिये असह्य होते जा रहे थे—परन्तु वे यह सोच भी न सके थे कि एकमात्र अपने पति और पुत्र को इस भाँति निर्मम होकर छोड़ कर चली जायगी।

प्रातःकाल होने पर जल्दी-जल्दी वे अपने नित्य कर्म से निवृत्त होकर विनोद को कुछ पथ्य पानी दे और तसल्ली दे मालती देवी के मकान पर पहुँचे। मालती देवी से मुलाकात होने पर उन्होंने कहा—सम्भवतः मेरी पत्नी मायादेवी आपके यहाँ आ गई हैं, कृपया जरा उन्हें बुला दीजिए, मैं उन्हें घर ले जाने के लिए आया हूँ।"

मालती देवी ने जवाब दिया—"श्रीमती मायादेवी आप से

मुलाकात करना नहीं चाहतीं, पत्नी की हैसियत से आप के साथ रहना नहीं चाहतीं, आप ने उनपर अत्याचार किया है। अतः आजाद महिला संघ के नियम के अनुसार हमने उन्हें आश्रय दिया है, और मुझे आप से यह कहना है कि आप उनकी मर्जी के विरुद्ध न मिल सकते हैं न उन्हें जबर्दस्ती साथ ले जा सकते हैं।"

"परन्तु वह मेरी पत्नी हैं, मुझे उनसे मिलने तथा अपने साथ उन्हें घर ले जाने का अधिकार है।"

"तो आप इसके लिए कानूनी चारागोई कर सकते हैं।"

"परन्तु इसकी आवश्यकता क्या है, यह पति पत्नी के बीच की बात है।"

"सैकड़ों वर्षों के उत्पीड़न के बाद अब इस बात की आवश्यकता आ ही पड़ी है कि पति-पत्नी के बीच भी कानून हस्तक्षेप करे, जिससे पति के अत्याचारों से पत्नी की रक्षा हो।"

"परन्तु कहीं अत्याचार की बात भी हो, इस प्रकार की चेष्टा तो स्त्रियों ही का अत्याचार है।"

"तब तो अवश्य कानून आप का सहायक होगा, अब आप जा सकते हैं।"

"कृपा कर मेरी पत्नी को बुला दीजिये—झंझट मत खड़ा कीजिये।"

"आप स्वयं ही संघ के आफिस में झंझट खड़ा कर रहे हैं। कृपया आप चले जाइये।"

"मैं अपनी पत्नी को यहां से ले जाने के लिये आया हूँ।"

"वह आप के साथ नहीं जाना चाहतीं।"

"मैं उन्हें समझा लूँगा, आप उन्हें बुलाइये।"

"वह आप से बात भी करना नहीं चाहतीं।"

"आप गजब करती हैं मालती देवी, एक पति और पुत्र से उसकी पत्नी और माता को जुदा करती हैं, आप को तो मेरी सहायता करनी चाहिये।

"शायद कानून आपकी सहायता करे।"

"आप व्यर्थ ही बारम्बार कानून का नाम क्यों घसीटती हैं, पति पत्नी के बीच आत्मा का सम्बन्ध है, कानून की इसमें क्या आवश्यकता ?"

"मैं आप से इस समय, इस विषय पर विवाद नहीं कर सकती।"

"मैं भी विवाद करना नहीं चाहता। आप मेरी पत्नी को बुला दीजिये।"

"वह नहीं आयेंगीं ?"

"क्यों नहीं आयेंगी ?"

"यह उनकी इच्छा है।"

"तो वे आकर कहें।"

"कहा तो, वे आपसे बात करने को तैयार नहीं।"

"यह तो आपका अन्याय है मालतीदेवी, आप नहीं जानतीं उनका पुत्र बीमार है, वह माँ को पुकार रहा है।"

"तो इसमें मैं क्या करूँ ?"

"आप दया कीजिए मालतीदेवी।"

"आप नाहक मेरा सिर खाते हैं।"

"आप कृपया मेरी पत्नी को बुला दीजिये।"

"वह नहीं आवेंगी, नहीं आवेंगी, नहीं आवेंगी।"

"उन्हें आना होगा।"

"आप धमकी देते हैं ?"

"मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ।"

"आप अभी बाहर चले जाइए।"

"मैं अपनी पत्नी को लेकर जाऊँगा।"

"क्या मैं पुलिस को फोन करूँ ?"

"आप मेरी पत्नी को बुला दीजिये।"

"आप बाहर नहीं जायेंगे।"

"मैं पत्नी को ले जाऊँगा।"

"चपरासी, मालती ने चपरासी को आवाज दी। एक पछैया लठैत ने हाथ में लाठी लेकर कमरे में प्रवेश किया। मालती ने कहा—"यह महाशय, मुझे धमकी दे रहे हैं, इन्हें कमरे से बाहर करो।"

लठैत के आगे बढ़ने से पहिले ही मास्टर जी अपने माथे का पसीना पोंछते हुए छाता बगल में दबा कर जाते हुए बोले—जाता हूँ, जाता हूँ।

एक बार उन्होंने पीछे फिरकर मालतीदेवी की निष्ठुर निर्मम मूर्ति को देखा और तेज कदम बढ़ाते हुये चले गये। उस समय उनके हृदय में द्वन्द मचा हुआ था।

१२

रात के नौ बज रहे थे। क्लब के एक आलोकित कमरे में तीन व्यक्ति बड़ी सरगर्मी से बहस में लगे थे। तीनों में एक थे डाक्टर कृष्ण गोपाल, दूसरे सेठजी और तीसरी थीं श्रीमती मालतीदेवी! डाक्टर और सेठजी खूब जोश में बहस कर रहे थे।

डाक्टर ने कहा—"जीवन की सामग्री पर नारी का अधिकार है नर का नहीं, क्योंकि कर्मक्षेत्र में नारी की ही प्रधानता है।"

"परन्तु पुरुष का ज्ञान सबसे बढ़ कर है।" सेठजी ने कहा।

"बेशक, पुरुष मस्तिष्क से ज्ञान प्राप्त कर सकता है, पर उसमें तब तक उसके प्रयोग की शक्ति उत्पन्न नहीं होगी जबतक कि नारी शक्ति का उसमें सहयोग न हो।"

"यह क्यों?"

"इसलिये कि पुरुष संसार का ज्ञान प्राप्त कर सकता है, पर उसमें सौन्दर्य की सृष्टि स्त्री ही करती है।"

"किन्तु किस प्रकार?"

"पुरुष मन और बुद्धि से कर्मक्षेत्र में विजय पाता है, स्त्री सहज चातुरी से। सच्ची बात तो यह है कि नारी की शक्ति ने नारी को वस्तुओं से बाँध रखा है। पाण्डवों को जय करने के लिये कौरवों को अठारह अक्षौहिणी सेना इकट्ठी करनी पड़ी, पर

द्रौपदी ने नेह के बन्धन से पाण्डवों को बाँध लिया।"

"परन्तु पुरुष के शरीर में बल है।"

"तो स्त्री के हृदय में शक्ति है, उसके हृदय में जो शक्ति की धार बहती है उसके प्रभाव से उसे किसी बाहरी बल की आवश्यकता नहीं। यही शक्ति उसके कोमल अंग को बज्र का-सा प्रहार सहने की शक्ति देती है। युग युग से वह पुरुष के भयानक प्रहारों को सहती आई है। सो इसी शक्ति की बदौलत। वह इन पुरुष-पशुओं की चिता पर जिन्दा जली है इसी शक्ति को लेकर। उसने अकेले ही विश्व भर के निर्मम पुरुषों को संयत संसार में बाँध रखा है इसी शक्ति की बदौलत।"

"फिर भी पुरुष सदा से समाज का स्वामी रहा है।"

"पर समाज की निर्मातृ देवी स्त्री है। पुरुष, पुरुष है, स्त्री देवी है। पुरुष में प्राण-शक्ति की न्यूनता है। पुरुष में सामर्थ्य का व्यय है स्त्री में आय। इसीसे नारी शील संस्कार की जितनी वशवर्तिनी है उतना पुरुष नहीं।"

"यह कैसे ?"

"आप देखते नहीं कि नारी जिसे एक बार स्पर्श करती है उसे अपने में मिला लेती है अपनापन खोकर।"

"और पुरुष ?"

"पुरुष तो केवल जानना और देखना चाहता है, अपनाना नहीं।"

"नारी भी तो।"

"नारी निष्ठा के कारण वस्तु-संसर्ग में जाकर लिप्त हो जाती है, जब कि पुरुष उससे अलग रहता है।"

"तो इसीसे क्या पुरुष नारी से हीन हो गया?"

"क्यों नहीं, जहाँ तक प्रतिष्ठा का सवाल है, नारी पुरुष से आगे है।"

"कहाँ?"

"अपने सारे जीवन में, नारी की प्रतिष्ठा प्राणों में है—पुरुष की विचारों में। इसलिए नारी सक्रिय है और पुरुष निष्क्रिय। इसी से पुरुष भगवान् का दास है परन्तु नारी पत्नी है। पुरुष भक्ति देता है स्त्री प्रेम। पुरुष विश्व को केन्द्र मानकर आत्म-प्रतिष्ठा की चेष्टा करता है और स्त्री आत्मा को केन्द्र मानकर विश्व प्रतिष्ठा करती है। इसी से समाज रचना और परिपालन में वही प्रमुख है।"

"फिर भी वह पुरुष पर आश्रित है।"

"वह कृत्रिम है। वास्तव में नारी केन्द्रमुखी शक्ति है और पुरुष केन्द्र विमुखी। नारी संसर्ग से ही पुरुष सभ्य बना है। नारी से ही धर्म संस्था टिकी है। एक अग्नि है दूसरा घृत। अग्नि में घृत की आहुति पड़ने ही से यज्ञ सम्पन्न होता है। स्त्री पुरुष का जब संयोग होता है तब उसे यज्ञ धर्म कहते हैं, सच्चे यज्ञ का यही स्वरूप है।"

"परन्तु सृष्टि-कर्ता पुरुष है।"

"पुरुष मन की सृष्टि करता है, नारी देह की सृष्टि करती है।

पुरुष जीवात्मा को जगा सकता है पर उसके आकार की रचना नारी ही करती है।"

"पुरुष हिरण्य गर्भ है।"

"नारी विराट् प्रकृति है।"

"पुरुष स्वर्ग है।"

"नारी पृथ्वी है।"

"पुरुष तपशक्ति का रूप है।"

"नारी यज्ञ शक्ति का। विवाह धर्माचरण है, स्त्री सहधर्मिणी है। उसके बिना पुरुष धर्माचरण नहीं कर सकता। दीन-हीन पुरुष संसार में रह सकता है, पर दीन-हीन नारी नहीं रह सकती। उसकी जीवन-शक्ति, सौन्दर्य के प्रकाश में रहता है।"

"संक्षेप में, समाज के दो समान रूप हैं, एक नर दूसरा नारी। दोनों एक वस्तु के दो रूप हैं। दोनों मिलकर एक सम्पूर्ण वस्तु बनती है।" मायादेवी ने विवाद का उपसंहार किया। इस मनोरंजक विवाद को सुनने क्लब के अन्य सदस्य भी एकत्र हो गये थे। सब ने करतल ध्वनि करके मायादेवी को साधुवाद दिया और सब लोग विनोदपूर्ण बातों में लग गए।

जब सब लोग विदा होने लगे तब डाक्टर मायादेवी के साथ-साथ मालतीदेवी के स्थान तक आए। दोनों में थोड़ा गुप्त परामर्श हुआ। और मायादेवी को मालती के स्थान पर छोड़कर डाक्टर अपने घर चले गये।

—:※:—

१३

डाक्टर कृष्ण गोपाल शहर के प्रसिद्ध चिकित्सक थे। उनकी प्रेक्टिस खूब चलती थी, उन्होंने नाम और दाम खूब कमाया था, मिलनसार सज्जन और उदार भी थे। विद्वान विचारक और क्रियाशील थे। इतने सद्गुणी होने पर भी वे सद्गृहस्थ न रह पाए। उनकी पत्नी विमला देवी, एक आदर्श हिन्दू महिला थीं। वैसी कर्मठ पतिप्राणा पत्नी पाकर कोई भी पति धन्य हो सकता है। ऐसे दम्पति का जीवन अत्यन्त सुखी होना चाहिए था, पर दुर्भाग्य से ऐसा न था। चरित्र की हीनता ने डाक्टर कृष्ण गोपाल के सारे गुणों पर पानी फेर दिया था। शराब और व्यभिचार, ये दो दोष उनमें ऐसे जमकर बैठ गए थे कि इनके कारण उनके सभी गुण दुर्गुण बन गए। और उनका जीवन अशान्त और दुःखमय होता चला गया।

श्रीमती विमला देवी जैसी आदर्श पत्नी थीं, वैसी ही आदर्श माता, गृहणी और रमणी भी। महल्ले भर में उनका मान था अपमान था केवल पति की दृष्टि में। पति अपनी गृहस्थी तथा पतिभाव की मर्यादा का पालन नहीं करते, यही उनकी शिकायत थी, और अब यह शिकायत तीव्र से तीव्रतम होती हुई उग्र झगड़े की जड़ बन गई थी, यह खेद और लज्जा की बात कही जानी चाहिये

कि डाक्टर जैसा सभ्य सुशिक्षित पति विमला देवी जैसी साध्वी शान्त पत्नी पर हाथ उठावे, पशु की भाँति व्यवहार करे, परन्तु प्रायः नित्य ही यह होता था। डाक्टर दिन-दिन बुरी सोहबत में फँसकर फजूल खर्चे, शराबी और व्यभिचारी बनते जा रहे थे। और अब तो वे उस दर्जे को पहुंच चुके थे जब उन्हें किसी धक्के की जरूरत ही न थी, वे स्वयं तेजी से फिसलते जा रहे थे।

मायादेवी से उनका साक्षात्कार होना तथा घनिष्टता की सीमा पार कर जाना उनके जीवन में तूफान ले आया। दोनों का दोनों के प्रति यह आकर्षण शुद्ध और प्रगाढ़ प्रेम का प्रतीक न था, कोरा वासना मूलक था। इसके अतिरिक्त माया और कृष्ण गोपाल दोनों ही अपनी सनक की झोंक में बिना आगा-पीछा सोचे बढ़ते चले जा रहे थे।

जब तब मायादेवी डाक्टर से लुक-छिपकर मिलतीं। पराई पत्नी थीं, तब तक डाक्टर की उनके प्रति उत्सुकता और व्यवहार कुछ और ही था। अब जब उन्होंने अपना घर और पति को त्याग दिया तथा तलाक की कानूनी कार्यवाहियाँ करने लगीं तब उनके विचारों में परिवर्तन और उलझन होने लगी। उनके कायर और चरित्रहीन मन में भय और आशंका ने घर कर लिया। वे सोचने लगे ऐसा करना क्या ठीक होगा। अब इतने दिन बाद विमलादेवी की ओर ध्यान देने का उन्हें समय मिला। यदि वे मायादेवी से विवाह करते हैं तो विमलादेवी को तो उन्हें त्यागना ही होगा। यद्यपि कभी उन्होंने अपनी पत्नी से प्रेमपूर्वक व्यवहार

नहीं किया था, पर इस अदल-बदल का प्रश्न आने पर उनके मन की उलझनें बढ़ गईं। कुछ देर के लिये प्रेम का खुमार ठण्ढा पड़ गया।

परन्तु बात अब बहुत आगे बढ़ चुकी थी। एक दिन मालती देवी के मकान में गम्भीर बात चीत हुई। बात चीत में मालतीदेवी माया देवी, डाक्टर कृष्णगोपाल तथा वकील साहेब उपस्थित थे। वकील साहेब कह रहे थे—

"हिन्दू का,'हिन्दू धर्म विवाह पद्धति पर विवाहित स्त्रियों की पुरुष संतति के उत्तराधिकार से सम्बन्धित सिर्फ कानूनी सत्ता है। हिन्दू स्त्रियों के अधिकारों की मीमांसा उसमें गौण है। जो आज कल की सुशिक्षिता और आधुनिकता का प्रतिनिधित्व करने-वाली, साथही हिन्दू सभ्यता और संस्कृति की मर्यादा पालन करने वाली स्त्री के लिए अपर्याप्त है। इसीलिए हिन्दू कोड कानून की सहायता लेनी पड़ी। इस कानून की मंशा मुख्यतया हिन्दू स्त्री की संतति के अधिकारों के लिए नहीं—प्रत्युत सीधे स्त्रियों के अधिकारों के लिए है। ये अधिकार सामाजिक और आर्थिक दोनों हैं।"

डाक्टर ने कहा—"किन्तु अबतक जिस प्रकार चल रहा था—वैसे ही चलना क्या बुरा था। एक पत्नी के रहते हुए भी दूसरी पत्नी रखी जा सकती है। हिन्दू लॉ इस मामले में बाधक नहीं।"

"जी हाँ, बाधक था। इसी से तो यह कानून बनाना पड़ा। जब तक ऐसे कानूनी संशोधन हिन्दुओं में नहीं हुए तब तक

सुशिक्षित परिवार में, जो हिन्दू संस्कृति के भी कायल हैं तथा स्त्रियों के समाजिक समानाधिकार भी चाहते है, दोनों प्रकार के विवाहों का रिवाज सा पड़ गया था। और आप देखते ही हैं कि इधर कुछ दिनों से सभ्य परिवारों में हिन्दू पद्धति पर विवाह होने के साथ ही, सिविल मैरिज विधान से भी विवाह किये जाते थे।"

"तो कानूनी, धार्मिक तथा सामाजिक दृष्टि से दोनों प्रकार से शादी करने में तो कोई नुक्स न था।

"बहुत था। स्त्रियों के अधिकारों की ठीक ठीक मर्यादा का पालन नहीं होता था।"

"किन्तु हिन्दू विवाह पद्धति में अब क्या अन्तर पड़ गया?"

"हिन्दू विवाह की तीन मर्यादाये हैं। और चार विधि। इनके बिना हिन्दू विवाह सम्पूर्ण नहीं माना जाता। इनके सिवा लोक प्रचलित रसूम भी बहुत हैं। वे तीन मर्यादायें हैं—(१) पति पत्नी का व्यक्तिगत शारीरिक और मानसिक जीवन सम्बन्ध और उसका सामाजिक दायित्व।

(२) पति पत्नी का एक दूसरे के परिवार और सम्बन्धियों से सम्बन्ध और उनकी मर्यादा।

(३) पति और पत्नी का आध्यात्मिक अविच्छिन्न जन्म जन्मान्तरों का सम्बन्ध।

इन्हीं मर्यादाओं पर हिन्दू-विवाह विधि निर्भर थी। आप अच्छी तरह समझ सकते हैं, कि ये सारे ही आधार आध्यात्मिक

हैं। और उनका आजकल के भौतिक जीवन के मेल नहीं खाता था। इसी से यह आवश्यकता पड़ी। सहस्रों वर्षों के बाद अब पति पत्नी के सम्बन्धों का नया अध्याय शुरू हुआ है जो दोनों को समान अधिकार देता है। अब तक तो स्त्री पति की गुलाम थी, सम्पत्ति थी, दौलत थी, जिन्दा दौलत !

"अन्धेर करते हैं आप, जिन्दा दौलत कैसे ? हम लोग तो स्त्रियों को वह मालिकाना अधिकार देते हैं कि घरबार सबकी मालिकन उसी को बना देते हैं।"

वकील साहब हँसकर बोले—किन्तु उसी प्रकार, जैसे बैंक का क्लर्क बैंक के रुपये पैसे और हिसाब किताब का मालिक रहता है। जनाब, आप इस बात पर चौंकते हैं कि मैंने कह दिया कि स्त्री को आप दौलत समझते हैं। आप क्या उन्हें 'स्त्री रत्न' नहीं कहते ? क्या आपके धर्मराज युधिष्ठिर ने अपनी पत्नी द्रौपदी को जुए के दाँव पर नहीं लगा दिया था। सत्यवादी हरिश्चन्द्र ने अपनी स्त्री को कर्जा चुकाने के लिये भेड़ बकरी की भांति बीच बाजार में नहीं बेच दिया था ?"

वकील साहब खूब जोश में जा रहे थे, परन्तु मालती देवी ने उन्हें बीच ही में रोककर कहा—"कृपया मतलब की बात पर आइये। अभी बहस रहने दीजिये।"

वकील साहब ने कहा—

"अच्छी बात है। मैं तो पहिले ही कह चुका हूँ कि कानून आपके हक में है और मैं आपकी सेवा में उपस्थित हूँ, केवल

फीस का सवाल है, सो आपने हल ही कर दिया—यह भी सम्भव है कि फीस का सवाल कभी उठे ही नहीं।" वकील साहब ने मायादेवी की ओर घूरकर देखा, फिर हँस दिया।

मायादेवी ने कहा—"फीस की बात बार-बार क्यों उठाते हैं। आप सिर्फ कानून की बात कीजिये।"

"कह चुका कि कानून आपके हक में है, अब आप यह विचार लीजिये कि आप क्या अपने पति से विच्छेद करने पर आमादा हैं?"

"मैं बिलकुल अमादा हूँ।"

"अच्छी तरह सोच लीजिये श्रीमती जी, आगे पीछे की सभी बाधाओं पर विचार कर लीजिये।"

"और बाधा क्या है?"

"आपके पतिदेव उज्र कर सकते हैं।"

"मैं उनका कोई उज्र न सुनूँगी।"

"आपके सन्तान का भी प्रश्न है।"

"मुझे सन्तान से कोई वास्ता नहीं।"

अब मालती देवी ने बीच में उन्हें रोककर कहा—"ठहरिये! डाक्टर साहेब, मैं आपसे एक प्रश्न करना चाहती हूँ—क्या आप श्रीमती मालतीदेवी से विवाह करने को तैयार हैं?"

डाक्टर जरा उलझन में पड़ गये। उन्होंने जरा धीमे स्वर में कहा—"आपका क्या ख्याल है कि इसमें मुझे कुछ बाधा होगी?"

"बहुत बड़ी बाधा हो सकती है। पहिली बात तो यह है कि

आपको अपनी पूर्व पत्नी का त्याग करना होगा।"

"यह क्या अत्यन्त आवश्यक है?"

"अनिवार्य है।"

"परन्तु यदि वह इन्कार करे।"

"तो आपके लिये दो मार्ग हैं। आप या तो उन्हें दोषी ठहरायें—या उन्हें उनका मांगा भरणपोषण को धन दें।"

"दोष कैसा?"

"दुराचार का।"

डाक्टर के मनमें मर्मान्तिक कहीं चोट लगी। भला विमला जैसी सती साध्वी पर दुराचार का दोष कैसे लगाया जा सकता है। उन्होंने प्रकटतया कहा—"मैं उसे उचित भरण-पोषण देने को तैयार हूँ।" परन्तु यह कहकर डाक्टर उदास हो गये थे और उनका मन बेचैन हो गया था।

मायादेवी ने इस बात को भाँप लिया। उसके आत्म सम्मान और अहंभाव पर कहीं चोट लगी। उसने कहा—"वकील साहेब, मेरे इस मामले से डाक्टर साहेब के मामले से क्या सम्बन्ध है?"

"कुछ भी नहीं।"

"कुछ भी नहीं कैसे, इसीलिये तो तुम अपना घर त्याग रही हो—इसे क्यों छिपाती हो।"

"मैं किसी पर बोझ बनना पसन्द नहीं करती, मै केवल स्वतन्त्र जीवन चाहती हूँ" मायादेवी ने उदास भाव से कहा।

वकील साहेब ने उत्साहित होकर कहा—"ठीक है, ठीक है,

फिर मायादेवी जैसी पत्नी जिसके भाग्य में हो वह तो स्वयं ही धन्य हो जायगा।"

"मेरा अभिप्राय केवल यही है कि पुरुषों ने जो सैकड़ों वर्ष से स्त्रियों को साहस, ज्ञान और संगठन से रहित कर रखा है, उन्हें अपनी वासना की दासी और बच्चे पैदा करने की मशीन बना रखा है, यह न होना चाहिये। उनका एक पृथक् अस्तित्व है। मैं अपने उदाहरण से यह दिखाना चाहती हूँ। मैं चाहती हूँ कि पुरुष स्त्रियों की शक्ति का भरोसा करें। और वे प्यार के नाम पर उनपर जुल्म न कर सकें।"

मालती ने कहा—"मायादेवी, यह सब तो ठीक है। पर देखो, आदर्श के नाम पर व्यवहार को मत भूलो। इस काम को व्यवहारिक दृष्टि से देखो। मैं साफ साफ डाक्टर साहेब से पूछती हूँ कि मायादेवी का पूर्व पति से विच्छेद होने पर आप उससे तुरन्त विवाह करेंगे?"

"मुझे उज्र नहीं है, पर विमलादेवी का मसला कैसे हल होगा?"

"उसे आपको त्यागना होगा।"

"और लड़की को?"

"उसका निर्णय अदालत के आधीन है।"

"पर यदि विमलादेवी ने विरोध किया?"

"तो आपको उससे लड़ना होगा, आपको हर हालत में उसे

त्यागना होगा। आप पशोपेश मत कीजिये। जो कहना है साफ साफ कहिये।"

"तो मालती देवी, विमला से आप ही मिलकर मामला तय कर लीजिये। आप जो निर्णय करें मुझे स्वीकार होगा। सम्भव है कोई आपसी समझौता ही हो जाय।"

"अच्छी बात है मैं उससे मिलूँगी, परन्तु यह तय है कि दोनों विच्छेद के मामले एक साथ ही कोर्ट में जायेंगे।"

"ऐसा ही सही।" डाक्टर ने गम्भीरता से जवाब दिया। वकील साहेब ने कहा "यह और भी अच्छा है। जैसा निर्णय हो, वह आप तय कर लीजिये।"

इसके बाद यह मजलिस बर्खास्त हुई।

—०:❀:०—

१४

इस बातचीत के बाद डाक्टर कृष्ण गोपाल ने घर आना जाना और विमला देवी से मिलना बन्द कर दिया। अवसर पाकर मालती देवी ने विमला देवी से उनके घर जाकर मुलाकात की। दोनों में इस प्रकार बात-चीत प्रारम्भ हुई।

मालती देवी ने प्रारम्भिक शिष्टाचार के बाद कहा—"मैं आप के पास अप्रिय संदेश लाई हूँ विमला देवी, नहीं जानती—कैसे कहूँ।"

"कुछ-कुछ तो मैं समझ ही गई हूँ। परन्तु आप को जो कहना है वह खुलासा कह डालिये।"

"परन्तु आप को दुख होगा।"

"स्त्री के सुख दुख से तो आप जानकार हैं ही मालती देवी। आप भी तो स्त्री हैं। स्त्री का सुख दुःख स्त्री ही ठीक-ठीक जान सकती है, फिर आप को संकोच क्यों ?"

"सोचती हूँ कैसे कहूँ ?"

"न कहने से दुःख तो टलेगा नहीं।"

"यह तो ठीक है।"

"फिर, आप को जो कहना है वह कह दीजिये।"

"मैं आप के पति के पास से समझौता करने आई हूँ।"

"आप क्यों आई हैं।"

"आप के पति के अनुरोध से।"

"परन्तु अपने पति के साथ कोई समझौता करने के लिये पत्नी को किसी तीसरे व्यक्ति की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। पति पत्नी तो अपने जीवन के सुख दुःख के साथी—साझीदार हैं—किसी बात पर यदि उनमें विवाद उठ खड़ा हुआ है—तो वे आपस में मिलकर ही कर सकते हैं, किसी मध्यस्थ के द्वारा नहीं।"

"परन्तु परिस्थिति ऐसी आ पड़ी है कि मुझे मध्यस्थ बनना ही पड़ा।"

"किन्तु मैंने तो आप को मध्यस्थ बनाया नहीं।"

"आप के पति ने बनाया है।"

"किन्तु मैंने नहीं, जब तक हम दोनों समान भाव से आप को मध्यस्थ न बनायें आप कैसे मध्यस्थ बन सकती हैं।"

"तो क्या आप मुझसे बात-चीत करना ही नापसंद करती हैं?"

"जी नहीं, आप को जो कहना है कह दीजिये, मैं आप को अपने पति का संदेश-वाहक समझ कर आप की बात सुनूँगी—परन्तु समझौते की यदि नौबत पहुँचती तो—वह मेरे और उनके बीच प्रत्यक्ष ही होगा। किसी मध्यस्थ के द्वारा नहीं।"

"तब संदेश ही सुन लीजिए, आप के पति ने आप को त्यागने का सकल्प कर लिया है, वे आप को तलाक दे रहे हैं।"

"मैंने आप का संदेश सुन लिया।"

"आप को इस सम्बन्ध में कुछ कहना है ?

"जो कहना है उन्हीं से कहूँगी, वह भी तब, जब वे सुनना चाहेंगे, नहीं तो नहीं।"

"किन्तु क्या आप अपने पति से लड़ेंगी ?"

"जी नहीं।"

"आप के पति, यदि आप उनसे न लड़ें और समझौता कर लें तो वे आपको यह मकान और समुचित मासिक वृत्ति देने को तैयार हैं।"

"मैं तो पहिले ही कह चुकी हूँ कि इस सम्बन्ध में मैं आपसे कोई बात करना पसन्द नहीं करती।"

"किन्तु बहिन, मैं तो तुम्हारी भलाई के लिये ही यहाँ आई हूँ।"

"इसके लिये मैं आपकी आभारी हूँ।"

"आप भली-भाँति जानती हैं, कि यह स्त्रियों की स्वाधीनता का युग है। आप भी इस बात से इन्कार न कर सकेंगी कि जिन पति-पत्नियों में परस्पर एकता के भाव नहीं, उनका विच्छेद हो जाना ही सुखकर है।"

"मेरे विचार कुछ दूसरे ही हैं और वे मेरी शिक्षा और संस्कृति पर आधारित हैं, मैं विश्वास करती हूँ कि पति-पत्नी का सम्बन्ध उसी प्रकार अटूट है जैसे माता और पुत्र का, पिता और पुत्र का, तथा अन्य सम्बन्धियों का। वह जो अपने पितृ

कुल को त्याग कर पति कुल में आई है तो इधर-उधर भटकने के लिए नहीं, न ही अपनी जीवन मर्यादा समाप्त करने के लिये। रही एकता न रहने की बात, सो पिता-पुत्र, माता-पुत्र में भी बहुधा मतभेद होता है, लड़ाइयाँ होती हैं, मुकद्मेबाजी होती है, बोल-चाल भी बन्द रहती है, फिर भी यह नहीं होता कि वे अब माता-पिता या पुत्र-पुत्री नहीं रहे। कुछ और हो गये।"

"परन्तु पति-पत्नी की बात जुदा है, विमला देवी।"

"निस्सन्देह, यह सम्बन्ध पिता-माता-पुत्र के सम्बन्ध से कहीं अधिक घनिष्ट और गम्भीर है। पुत्र, माता-पिता के अङ्ग से उत्पन्न होकर दिन-दिन दूर होता जाता है। पहिले वह माता के गर्भ में रहता है, फिर उसकी गोद में, इसके बाद घर के आँगन में, पीछे आँगन के बाहर और तब सारे विश्व में वह घूमता है। परन्तु पत्नी दूर से पति के पास आती है, वह दिन-दिन निकट होती जाती है। उनके दो शरीर जब अति निकट होते हैं तब उससे तीसरा शरीर संतान के रूप में प्रकट होता है, जो दोनों के अखण्ड संयोग का मूर्ति-चिन्ह है। अब आप समझ सकती हैं कि पति-पत्नी विच्छेद का प्रश्न उठ ही नहीं सकता है।"

"तो आप क्या यह कहती हैं कि यदि पति-पत्नी दोनों के प्रकृति-स्वभाव न मिलें, और दोनों के जीवन भार स्वरूप हो जायँ तो भी वे परस्पर उसी हालत में रहें। क्या जीवन को सुखी बनाना उन्हें उचित नहीं है।"

"यदि चाहे भी जिस उपाय से केवल जीवन को सुखी बनाने

को ही जीवन का ध्येय मान लिया जाय तो फिर चोर, डाकू, ठग, अनीति मूलक रीति से जो धनार्जन करते हैं, शराब पीकर और वेश्यागमन करके सुखी होना समझते हैं, उन्हें ही ठीक मान लेना चाहिये। पर मेरा विचार तो यह है कि सुख-दुःख जीवन के गौण विषय हैं। जीवन का मुख्य अधार कर्तव्य-पालन है। मनुष्य को अपने जीवन में धैर्यपूर्वक कर्तव्य-पालन करना चाहिये। कर्तव्य ही मनुष्य जीवन की चरम मर्यादा है, इसी की राह पर चलकर बड़े-बड़े महापुरुषों ने सुख-दुःख की राह समाप्त की है, मेरा भी आदर्श वही है।"

"परन्तु दुर्भाग्य से आपके पति के ऐसे विचार नहीं हैं।"

"तो मैं अपनी शक्ति भर उनसे लड़ती रहूँगी। पर अपने मार्ग से हटूँगी नहीं।"

"यदि वे आप को त्याग दें।"

"पर मैं तो उन्हें त्यागूँगी नहीं—त्याग सकती भी नहीं।"

"क्या आप अपने पति से संतुष्ट हैं। क्या आप उन्हें संतुष्ट रख सकी हैं।"

"इसका हिसाब-किताब तो मैंने कभी रखा नहीं। परन्तु मैंने ईमानदारी से सदा अपना कर्तव्य-पालन किया है।"

"और उन्होंने ?"

"इसकी वे जाने।"

"आपके भी कुछ अधिकार हैं विमलादेवी।"

"अधिकारों पर तो मैंने कभी विचार ही नहीं किया।"

"पर अब तो करना होगा।"

"नहीं करूँगी।"

"पर आपके पति अपने अधिकारों की रक्षा करेंगे।"

"मैं तो अपना कर्तव्य-पालन करती रहूँगी।"

"कब तक।"

"जब तक जीवित हूँ।"

"यदि वे आपको त्याग दें?"

"तो भी मैं उन्हें नहीं त्यागूँगी।"

"परन्तु कानून तलाक को स्वीकार कर दे तो।"

"तो भी नहीं।"

"क्या आप कानून के विरुद्ध लड़ेंगी।"

"लड़ने की मुझे आवश्यकता ही नहीं है।"

"यदि वे अपना दूसरा विवाह करें।"

"वे जो चाहे करें।"

"आप और कुछ कहना चाहती हैं!"

"नहीं।"

"उन्होने कुछ रुपया मेरे द्वारा आपके पास भेजा है, आप लेंगी?

"नहीं लूँगी।"

"क्यों।"

"उनका धन मेरा ही है, उसे आपके हाथ से क्यों लूँगी। हाँ, देना हो तो आपको प्रसन्न मन से दूँगी।"

"क्षमा कीजिये, आप अव्यवहारिक है। मैं आपकी सहायता देने के विचार से आई थी।"

"मैं आपको धन्यवाद देती हूँ।"

"खैर, जब कभी आपको मेरी सहायता की आवश्यकता हो—आप मुझे याद कर सकती हैं।"

"आपकी कृपा के लिये मैं अत्यन्त कृतज्ञ हूँ।"

मालतीदेवी खिन्न मन उठकर चल दीं। जलपान का अनुरोध उसने नहीं माना।

—:※:—

१५

श्रीमायादेवी और डाक्टर कृष्ण गोपाल दोनों ही के तलाक के मुकदमें अदालत में दाखिल कर दिये गये। मालती देवी ने पति पर अत्याचार-अयोग्यता तथा अनीति मूलक व्यवहार के आरोप लगाये। मास्टर साहेब ने लोभ और दुःख के कारण जवाबदेही नहीं की। माया देवी को तलाक मिल गई। परन्तु इसपर जितना भी मायादेवी को साधुवाद, धन्यवाद और बधाइयां दी जाने लगीं उतना ही उनका शोक और व्यग्रता बढ़ती गई। रहरह कर पति की निरीह, नैराश्य मूर्ति उनके नेत्रों में घूम जाती, पुत्र की पीड़ा से भी वह बेचैन हो जातीं। वह जितना अपने मन को प्रबोध देतीं, भावी सुख का चित्र खींचती, उतना ही उनका मन निराशा से भर जाता।

डाक्टर कृष्णगोपाल की तसल्ली और आदर सत्कार उसे अब उतना उल्लासबर्धक नहीं दीख रहा था। तथा रह रह कर उसे अपना घर, अपना पति, अपना पुत्र याद आ रहा था। वह खोई सी, रहने लगी जैसे उसके सब संबन्ध सहारे नष्ट हो गये हों। उसका मन चिन्ता घबराहट और उदासी से भर गया।

डाक्टर कृष्णगोपाल के मुकदमें में बिमलादेवी ने अदालत में उपस्थित होकर जज से मनोरंजक वार्तालाप किया।

जज ने पूछा—"श्रीमती विमलादेवी, आपके पति डाक्टर कृष्णगोपाल ने आपके विरुद्ध तलाक का मुकदमा दायर किया है। आपको कुछ उज्र हो तो पेश कीजिये।,,

"आप किसलिये मेरा उज्र पूछते हैं ?

"इसलिए कि आपको उज्र करने का कानूनन अधिकार है।"

"मैं एक हिन्दू गृहस्थ की पत्नी हूँ। मैं अधिकार नहीं चाहती, मैं कर्तव्य पालन करना चाहती हूं। मेरे पति जब जहाँ जिस हालत में रहेंगे—मैं अपना कर्तव्य उनके प्रति पालन करती रहूँगी।"

"मेरा अभिप्राय यह है कि तलाक स्वीकार होने पर······"

"हिन्दू स्त्री प्रदता है। उसे तलाक स्वीकार करने का अधिकार नहीं हैं।"

"स्वीकार न करने पर भी कानूनन उसका सम्बन्ध पति से टूट जायगा।"

"केवल शरीर सम्बन्ध! परन्तु हिन्दू स्त्री का पति से केवल शरीर-सम्बन्ध ही नहीं है। लाखों करोड़ों विधवायें आज भी पति के मर जाने पर जीवन भर वैधव्य धारण कर उसी के नाम पर बैठी रहती हैं।"

"परन्तु यह तो अन्याय है विमलादेवी।"

"आप न्याय को कानून के तराजू पर तोलते हैं, इसलिए आपको यह अन्याय प्रतीत होता है, यदि इसे धर्म की तराजू पर तौला जाय तो यह तप है। और तप एक पुण्य है। और पुण्य कदापि अन्याय नहीं।

"परन्तु यह पुण्य या तप-जो कुछ भी आप समझें, पुरुष तो करते नहीं।"

"वे करें, उन्हें रोका किसने है ?

"परन्तु वे करते तो नहीं।"

"हाँ, नहीं करते, इसका कारण यह है कि उनमें तप करने की, पुण्य करने की शक्ति नष्ट हो गई है। वे बेचारे तप-पुण्य कर ही नहीं सकते। उन्होंने शरीरबल उपार्जन किया—हमने अध्यात्मिक। उन्होंने व्यावहारिक-दुनियाँ को अपनाया, हमने अपनाया आदर्श और निष्ठा की दुनियाँ को।"

"परन्तु एक नवयुवती विधवा होनेपर पति के नाम पर जीवन भर विधवा होकर बैठी रहे, इसे आप पुण्य कैसे कहती हैं।"

"इसे आप नहीं समझ सकते, इस प्रश्न का उत्तार कानून नहीं दे सकता।"

"तो आप उत्तर दीजिये।"

"उत्तर दे सकती हूँ, पर आप चूँकि पुरुष हैं समझ नहीं सकेंगे।"

"फिर भी आप कहिये।"

"पति-पत्नी सम्बन्ध में स्त्रियों और पुरुषों के आदर्शों में अन्तर है। पुरुष के लिये दाम्पत्य का अर्थ है उपभोग।"

"और स्त्री के लिये !"

"संयम ! और यह नैसर्गिक है कृत्रिम नहीं। आप कानून, पुरुषों के लिये उनकी सम्पत्ति के लिए बना सकते हैं, और उन्हें

लाभ पहुँचा सकते हैं। परन्तु स्त्रियों के लिये नहीं। कानून का अर्थ है—शान्तिपूर्वक उपभोग करो। लेकिन स्त्री पर कानून का नहीं—धर्म का शासन है। धर्म कहता है—संयम से पहले अपने को वश करो—फिर संसार को।"

"क्या स्त्रियां वैधव्य से और खराब पतियों से दुःख नहीं पातीं?"

"पाती हैं, पुरुष भी खराब स्त्रियों से दुःख पाते हैं, सुख, दुःख मनुष्य का भोग है, संसार का अनिवार्य पदार्थ है। उससे कैसे बचा जा सकता है।"

"परन्तु कानून तो जीवन में एक व्यवस्था कायम करता है।"

"सो करे।"

"तो कानून की दृष्टि में तलाक के बाद आप डा० कृष्णगोपाल की पत्नी न रहेंगीं।"

"समझ गई। परन्तु मैं भी कह चुकी हूँ कि मैं उनकी पत्नी ही रहूँगी। हाँ एक बात है। अब तक मैंने पति के द्वारा दिया गया दुःख भोगा और अब कानून के द्वारा दुःख भोगूंगी।"

"आप दूसरा विवाह करके सुखी हो सकती हैं।"

"परन्तु मुझे पुरुषों के इस सुख पर ईर्षा नहीं, दया है।"

"खैर, तो आपका और आपके पति का पति-पत्नी सम्बन्ध समाप्त हुआ। परन्तु आप जिस मकान में रहती हैं उसी में उसी भाँति रह सकती हैं। वह मकान आपके भूतपूर्व पति ने आपको

दे दिया है तथा दस हजार रुपया आपके जीवन निर्वाह के लिए दे दिया है। आपकी लड़की भी शादी होने तक आपही के पास रहेगी। परन्तु उसकी शादी और शिक्षा का भार आपही पर रहेगा। हाँ उसका एक बीमा डाक्टर साहब ने कर दिया है। जब उसका विवाह होगा, तब वह दस हजार रुपया शादी के खर्च के लिए आपको और मिल जायगा, क्या आपको कुछ कहना है।"

"जी नहीं।"

"तो आप जा सकती हैं।"

विमलादेवी चुपचाप चली आईं। और डाक्टर कृष्णगोपाल छाती में तीर लगने से जैसे हिरन छटपटाता है, उस भाँति की वेदना से तड़पते हुये, अपने नये आवास की ओर लौटे। उनकी आँखें झुकी हुई थीं, और लज्जा, ग्लानि, क्षोभ का जो प्रभाव इस समय वे अनुभव कर रहे थे, उसकी उन्होंने कभी कल्पना भी न की थी।

—०:※:०—

१६

तलाक हो जाने के बाद मायादेवी और डाक्टर कृष्ण गोपाल दोनों परस्पर बहुत कम मिलते, मिलने पर भी गुम सुम रहते, दोनों ही परस्पर मिलने पर एक दूसरे को प्रसन्न करने की चेष्टा करते, परन्तु यह बात दोनों ही जान जाते कि यह चेष्टा स्वाभाविक नहीं है कृत्रिम है। मायादेवी अभी मालती देवी के साथ ही रह रही थीं, और डाक्टर कृष्ण गोपाल अपने दूसरे मकान में आ गये थे। केवल उनका एक विश्वासी नौकर उनके साथ रहता था। एक गहरी उदासी की छाया हर समय उनके मन पर बनी रहती थी। और वे रह-रहकर ऐसा समझने लगते थे मानों उन्होंने कोई बड़ा जघन्य पाप-कर्म कर डाला हो। वास्तव में बात यह थी कि दोनों भयभीत से रहते थे, दोनों ही जैसे कुछ ऐसी घटना की प्रतीक्षा सी कर रहे थे मानों कोई दुर्घटना घटने वाली हो।

'विवाह' एक ऐसा शब्द है—जिसके नाम ही से युवक युवतियों के हृदय में नवजीवन और आनन्द की लहर उठने लगती है—परन्तु इतने संघर्ष और कठिन प्रयास के बाद जब दोनों की मिलन-बाधायें खत्म हो गईं तो अब जैसे वह मिलन ही उनके लिये भय की वस्तु बन गई। परन्तु जैसे भय का सामना करने को मनुष्य साहस करता है उसी भाँति दोनों ने साहस किया—

और केवल चुने हुए मित्रों की उपस्थिति में दोनों का विवाह सम्पन्न हो गया। विवाह हो जाने पर दोनों ही ने ऐसा अनुभव किया मानो उनके शरीर में रक्त की एक-एक बूँद निकाल ली गई हो।

मित्रों का आनन्दोत्सव और हा-हू जब समाप्त हो गया तो अन्त में एकान्त रात्रि में दोनों का एकान्त मिलन हुआ। इसे आप सुहाग रात का मिलन कह सकते हैं, पर यह वह सुहाग रात न थी जो प्रकृति की प्रेरणा की प्रतीक है, जहाँ जीवन में पहली बार बसंत विकसित होता है—यहाँ तो वर वधू दोनों ही एक संतति के जन्मदाता थे। पति एक दूसरी पत्नी का अत्याचारी पति था और स्त्री एक सीधे सच्चे निर्दोष पति की पत्नी थी।

स्वभावतः ये दोनों ही—निर्बुद्धि और पाशविक प्रवृत्ति के हीन पुरुष न थे। विचारवान और सभ्य थे। यद्यपि डाक्टर को मद्यपान की आदत थी—और वह दुराचारी तथा वेश्यागामी भी था परन्तु, आज इस सुहाग रात के एकान्त मिलन में उसकी सारी विलास-वासना जैसे सो गई थी। उसे ऐसा अनुभव हो रहा था मानों उसकी रगों में रक्त नहीं—वर्फ का पानी भरा हुआ है। वह जितना ही प्रसन्न और उत्साहित रहने की चेष्टा करता उतनी ही उसकी चेष्टायें हास्यास्पद और वीभत्स बन जाती थीं। अपनी साध्वी सुशीला पत्नी विमला देवी के प्रति अपने किये सब अन्याय मूर्तिमान होकर, जितना वह उन्हें भुलाना चाहता था—उतनी ही उसके सम्मुख उसके मानस नेत्रों में आ

घुसती थीं। उसकी दशा मद्यप, उन्मत्त तथा शोकार्त मनुष्य के समान हो रही थी। उसे स्पष्ट सुनाई दे रहा था कि उसकी पुत्री चीत्कार करके बाबूजी, बाबूजी, पुकार रही है। इस समय वह मायादेवी की ओर आँख उठा कर भी देखने का साहस न कर सकते थे।

मायादेवी की दशा भी कुछ ऐसी ही थी, उसका मन हाहाकार कर रहा था। उसकी इच्छा हो रही थी कि गले में फाँसी लगा कर मर जाय। विवाह काल में कुछ लोगों ने व्यंग किया था—वह अब सैकड़ों बिच्छुओं की भाँति डंक मार कर उसे तड़पा रहा था।

वह छिपी नजर से बीच-बीच में अपने नए पति की ओर देख लेती थी। उसे याद आ रहा था—यही वह आदमी है जो क्लब में मेरे सामने ही शराब पीता था। इस समय मायादेवी को इस नये पति के चेहरे में ऐसे अप्रिय और घृणा उत्पादक भाव दीख पड़ते थे कि उसका मन उसके सामने से भाग जाने का हो रहा था। वह सोच रही थी—अपने त्यागे हुए पति की बात। आज तक कभी उन्होंने एक कड़ा शब्द उससे कहा नहीं, कभी उसने उनका क्रोध से भरा चेहरा देखा नहीं। कभी उसके पति ने शराब छुई नहीं, वह सदा अपनी सारी आमदनी उसी को देते। उसकी एक प्रकार से पूजा करते। वह सोचने लगी अपनी पहिली सुहागरात की बात—फिर उसने आप ही आप

भुनभुना कर कहा—क्या-क्या—यह आज की रात भी सुहागरात कही जा सकती है? क्या यह शराबी, दुराचारी और अपनी साध्वी पत्नी के साथ निर्मम अत्याचार करने वाला पुरुष उसके साथ वैसा ही कोमल भावुक बन कर रह सकेगा—जैसा उसका प्रथम पति था; परन्तु यह प्रथम और दूसरा क्या? पत्नी का पति तो एक ही है। क्या उसके जीवित रहते मैं दूसरे पुरुष को अपना अंग दिखलाऊँ? स्वाधीन होने की आग में मैं अवश्य जल रही हूँ—पर इसके लिये मैं अपने शरीर को अपवित्र करूँ? नहीं, वह मैं न कर सकूँगी। नहीं कर सकूँगी। नहीं कर सकूँगी। एकाएक उसे ज्ञात हुआ—कि उसके पुत्र ने उसके कण्ठ में हाथ डाल कर पुकारा—माँ, और जैसे उसने उसे उठाकर खिड़की की राह बीच सड़क पर फेंक दिया। वह एक चीख मार कर बेहोश हो गई।

यत्न करने पर उसे होश हुआ। तो उसने अपने वस्त्र ठीक करके मुस्कुरा कर डाक्टर से कहा—बैठ जाइये, अब मैं ठीक हूँ।"

"तुमने तो मुझे डरा दिया।"

"समय ही अब ऐसा आ गया है, कि हम लोग अब एक दूसरे से डरते हैं।

"नहीं, नहीं, लेकिन।"

"डाक्टर साहेब, अपने को धोखा देने से क्या लाभ है, आप क्या मुझसे डरते नहीं।"

"किन्तु मैं तुम्हें कितना प्यार करता हूँ, मैं अपने जीवन में..."

"यह सब जो कहते हैं—या जो कहना चाहेंगे, मैं जानती हूँ। परन्तु देखिये प्यार की बात छोड़िए। आप विद्वान और विचार-शील पुरुष हैं, इस समय हम खतरे के बिल्कुल किनारे पर खड़े हैं। कहिये, क्या आप में कुछ विवेक है।

"है" डाक्टर ने सिर नीचा करके कहा।

"तो फिर बहस से क्या लाभ, आप के चेहरे की एक-एक रेखा में आप की मनोभावना व्याप्त है, विलम्ब का काम नहीं, आप कहें तो मैं एक प्रस्ताव उपस्थित करूँ।"

"कहो।"

"इस सुहागरात की शैया को अपवित्र करने की आवश्यकता नहीं है। आप एक मर्द की भाँति मुझे मदद कीजिये कि मैं अपने पति और पुत्र के पास पहुँच जाऊँ।"

"परन्तु, अब यहाँ तक पहुंच कर क्या यह संभव है मायादेवी।"

"खूब संभव है, मनुष्य को चाहिये कि ज्योंही उसे अपनी भूल ज्ञात हो उसे तुरन्त सुधार ले। एक क्षण भी व्यर्थ न गँवावे।"

"तुम चाहती क्या हो मायादेवी।"

"मैं अपने पति और पुत्र के पास जा रही हूँ, मैंने उन्हें बहुत दिन से देखा नहीं है, मैं उनके लिये अधीर हो रही हूं।

इतना कहकर मायादेवी चुपचाप उठकर धीरे गति से सुहाग-रात से सजे हुए उस कमरे से बाहर निकल एक दम घर से बाहर आ खड़ी हुईं, पीछे-पीछे डाक्टर भी आया। मायादेवी ने कहा—

"अब मेरे पीछे क्यों ?"

"चलो, मैं तुम्हें पहुँचा दूँ !"

"मुझे आप से यही आशा थी, चलिए !"

तारों की छाँह में अँधेरे, उजाले मार्ग को पार करते हुए दोनों चले। घर के द्वार पर आकर डाक्टर ने कहा—"मायादेवी, मुझे जहाँ तक क्षमा कर सको—करना। अधिक कुछ न कहूँगा। अब मैं जाता हूँ।"

डाक्टर बिना उत्तर की प्रतीक्षा किए लौट गए। मायादेवी ने धीरे से द्वार खटखटाया।

मास्टर हरप्रसाद पुत्र को सुलाकर स्वयं सोने का प्रबन्ध कर रहे थे। आहट सुनकर द्वार खोला—माया दौड़कर घर के भीतर जा पुत्र से लिपटकर फूट-फूटकर रोने लगीं। मास्टर ने उसके सिर पर हाथ फेरकर कहा—"यह कैसा पागलपन है, सोते आदमी को परेशान करना।" माया फूट पड़ी। वह पति के चरणों में लोट गई। उसने कहा—"आप अपनी पत्नी का अपराध क्षमा न भी कर सकें तो भी अपने पुत्र की माँ पर दया कीजिए।"

"यह सब पागलपन की बातें हैं, उठो-उठो !" मास्टर हरप्रसाद ऐसे बोल रहे थे जैसे—मानों कोई घटना हुई ही न हो।

❀ हमारी प्रकाशित पुस्तकें ❀

२॥) आशियाना	२॥) इशारा	२॥) पपीहा बोले आधी रात
२॥) जलन	३॥।) निर्मोही	३) विप्लवी वीरांगना
४) लवँग	४) मंजिल	२) प्यासी तलवार
५॥) नीलम	२॥) पागल	२॥) नर और नारी
२॥।) अकेला	३॥) पपिहरा	१॥) होटल में खून
३) कुंकुम	३॥) पारस	१॥।) बड़े चाचा जी
४) पगडण्डी	२॥) ममता	१॥।) राजपूतनन्दिनी
३॥) धड़कन	२) महामाया	१॥) साहसी राजपूत
३॥) मुमताज	३॥।) खँडहर	३) पीली कोठी
३॥) पायल	३) सोलह अगस्त	३॥) झाँसी की रानी
२) नीलमणि	३॥) दो किनारे	२॥) मंदिर की नर्तकी
३) चौरंगी	२॥।) सांवरिया	२॥) काली घटा
२॥) सहारा	४) अँगड़ाई	१॥।) अमरसिंह राठौर
३॥) भँवरा	२।) मनोरमा	२॥) बागी की बेटी
३॥) आहुति	१॥) राजकुमारी	१॥।) प्रेम के आँसू
२॥) बसेरा	२) नदी में लाश	२॥) कागज के फूल
२॥) त्याग	१॥।) गरीब	१॥) उजड़ा घर
२) नरमेध	२।) हाहाकार	३॥) घर की लाज

२॥) चाँदनी	२॥) प्यासी आँखें	१॥) पृथ्वीराज चौहान
३।) जवानी का नशा	४॥) आत्मदाह	४) भारत सन् ५७ के बाद
१।) बन्धन	१।॥) रोटी	३॥) वीर दुर्गादास राठौर
४॥) चूड़ियाँ	२॥) तारों भरी रात	२) सरदार भगतसिंह
२॥) संसार की भीषण राज्यक्रान्तियाँ	३॥) ललकार	२॥) स्वास्थ्य और व्यायाम
	४) बहते आँसू	२।॥) रक्त की प्यास
३।) चितवन	३॥) काजल	३॥) मकड़ी का जाल

पताः—

चौधरी एण्ड सन्स,

बनारस १